

श्री सद्गुरुवे नमः

आवे न जावे मरे न जन्मे सोई सत्यपुरुष हमारा है

सत्यपुरुष को जानसी। तिसका सतगुरु नाम॥
धर्मदास तहँ बास हमारा। काल अकाल न पावे पारा॥
ताकी भक्ति करे जो कोई। भव ते छूटे जन्म न होई॥
एक पुरुष है सबते न्यारा। सब घट व्यापक अगम अपारा॥
ताकी भक्ति महा निरतारा। भक्ति करे सो उतरे पारा॥
सार शब्द को जो गहे, सोई उतरे पार।
पिंड ब्रह्मण्ड के पार है, सत्यपुरुष निजधाम॥

—सतगुरु मधु परमहंस जी

साहिब



बन्दगी

सन्त आश्रम रांजड़ी, पोस्ट राया, ज़िला साम्बा (जे. एण्ड के .)

आवे न जावे मरे न जन्मे सोई सत्यपुरुष हमारा है
—सतगुरु मधुपरमहंस जी

© SANT ASHRAM RANJRI (J & K)

ALL RIGHTS RESERVED

First Edition	—	July, 2011
Copies	—	5000

प्रचार अधिकारी

— राम रतन, जम्मू

Website Address.

www.sahibbandgi.org

www.sahib-bandgi.org

E-Mail Address.

*satgurusahib@sahibbandgi.org

Editor

Sahib Bandgi Sant Ashram Ranjri

Post -Raya, Distt.-Samba (J & K)

Ph. (01923) 242695, 242602

Mudrak : Deepawali Printers, Sodal Road, Preet Nagar, Jalandhar

1. ब्रह्म रूप न काहू चीन्हा	7
2. आवे न जावे मरे न जन्मे	14
3. स्वप्न से परे सत्य सत्य रूप भूप है	17
4. परम पुरुष तब गुप्त रहाय	18
5. हतै गुप्त प्रभु प्रगट होय आय	20
6. अंश अलग किये	21
7. शब्द पुत्र उत्पन्न किये	22
8. पाँचवें पुत्र को तीन लोक का राज्य दिया	23
9. अमर लोक से निरंजन को बाहर कर दिया	26
10. मोको कहाँ ढूँढ़े बंदे	31
11. अमर लोक सतगुरु क न्यारा	35
12. आत्मा प्रमात्मा स्वप्न रूप है	49
13. कहन सुनन से न्यारा है	53
14. अदाकर खुद खजाने से छुड़ा ले अपने बंदे को	59
15. साखियाँ साहिब की	62
16. सबद	68



दो शब्द

जेहि खोजत कल्पो भये, घटहि माहिं सो मूरि ।

बाड़ी गर्व गुमान ते, ताते परि गयो दूर ॥

हम परमात्मा की प्राप्ति सद्गुरु की कृपा से ही कर सकते हैं । जो दुनिया के लोगों ने मुक्ति का मार्ग चुना है, वो मन पर आश्रित है । कोई परमात्म-तत्व को जंगलों में ढूँढ़ रहा है, कोई तप में ढूँढ़ रहा है, कोई हठयोग में ढूँढ़ रहा है, कोई तीर्थों में ढूँढ़ रहा है । साहिब आपेक्ष कर रहे हैं—

कस्तूरी कुण्डल बसे, मृग खोजे बन माहिं ।

ऐसे घट घट साईया, मूरख जानत नाहिं ॥

मृगा की नाभि में कस्तूरी है । पर अज्ञानवश वो उसे जंगल में खोजता फिरता है । वो एक-एक बूटी को सूँघता फिरता है । वो सोचता है कि यह महक कहीं बाहर से आ रही है । ऐसे ही अपने अंदर से आने वाली उस महक को बाहर खोजते-खोजते उसका सारा जीवन समाप्त हो जाता है, पर उसे भेद मालूम नहीं हो पाता कि यह महक तो उसके भीतर से आ रही है । ऐसे ही जीव परमात्मा को कहीं दूर समझकर बाहर ढूँढ़ रहा है । साहिब आगे कह रहे हैं—

लाखों नर तलाश में,

घर मिला न अविनाशी का ॥

कुछ-2 परमात्मा को बाहर ढूँढ़ते हुए भटक रहे हैं । पर ऐसा भी नहीं है कि दुनिया केवल बाहर भटक रही है । वास्तव में यह दुनिया अंदर भी परमात्मा की खोज में बहुत भटक रही है । अंदर में कोई बंकनाल में भटक रहा है, कोई भँवर गुफा में भटक रहा है, कोई उनमुनि, खेचरी, भूचरी आदि मुद्राएँ करके भटक रहा है ।

कोई प्रार्थना करता है तो शून्य की तरफ निगाह करके कहता है

कि हे प्रभु ! मेरी आवाज़ सुनो । साहिब ने बड़ा प्यारा कहा—

मोको कहाँ ढूँढ़े ओ बंदे,
मैं तो तेरे पास में ।

कहा कि मैं तो तेरे पास में रहता हूँ ।

ना मैं जल में, ना मैं थल में,
नहीं शून्य आकाश में ॥

मैं पानी में भी नहीं रहता हूँ, धरती में भी नहीं और शून्य में भी नहीं रहता हूँ ।

ना तीरथ में ना मूरत में,
ना एकान्त निवास में ।

किसी तीर्थ स्थान में भी नहीं हूँ, मूर्ति में भी नहीं हूँ । कुछ जंगल में चले जाते हैं । पर कह रहे हैं कि मैं एकान्त में भी नहीं हूँ ।

ना मंदिर ना मस्जिद में,
ना काशी कैलाश में ॥

किसी मंदिर-मस्जिद में भी नहीं रहता हूँ । यानी किसी धर्मस्थान में भी नहीं हूँ । कुछ पहाड़ों में जाकर ढूँढ़ते हैं । पर वहाँ भी नहीं हूँ ।

ना मैं जप में ना मैं तप में,
ना मैं बरत उपास में ।

कुछ मंत्र जाप करते हैं । कह रहे हैं कि मैं जाप में भी नहीं हूँ । कुछ तपस्या करते हैं । पर वहाँ भी नहीं हूँ । व्रत, उपवास आदि में भी नहीं हूँ ।

ग़रीब लोग, जिन्हें कई बार कुछ खाने को नहीं मिलता है, उनका तो वैसे ही उपवास हो जाता है । फिर उन्हें मिल जाना चाहिए ।

ना मैं क्रिया कर्म में रहता,
नहीं योग सन्यास में ॥

कह रहे हैं कि किसी क्रिया में भी नहीं हूँ । योग, सन्यास आदि में भी नहीं हूँ ।

कुछ सुबह उठकर क्रियाएँ करते हैं, स्नानादि करते हैं। सुबह उठकर नहाना खराब बात नहीं है, पर यदि सोचें कि इससे परमात्मा मिल जायेगा तो ऐसा नहीं होगा। क्योंकि—

मीन सदा जल में रहे।

मैं किसी की यहाँ आलोचना नहीं कर रहा हूँ। पर मेरा लक्ष्य यह बताना है कि परमात्मा आपके अंदर है। बस, केवल पूर्ण सद्गुरु रूपी भेदी की जरूरत है।

**कहैं कबीर भेदी लिया,
पल में देत लखात ॥**

तो कुछ हठयोग करते हैं। ये औघट सिद्धांत हैं। कठिन तपस्या से, शरीर को कष्ट देने से परमात्मा मिलता तो बीमारों को पहले मिलना चाहिए। तो आगे कह रहे हैं—

**नहीं प्राण में नहीं पिंड में,
न ब्रह्माण्ड अकाश में।**

प्राणों में भी नहीं हूँ, शरीर में भी नहीं हूँ और आकाश में भी नहीं हूँ।

**ना मैं भृकुटि भँवर गुफा में,
नहीं नाभि के पास में ॥**

कुछ भृकुटि में ध्यान करते हैं। कह रहे हैं कि वहाँ भी नहीं हूँ। कुछ भँवर गुफा में जाकर धुनें सुनते हैं और कहते हैं कि यही है परमात्मा। पर साहिब कह रहे हैं कि मैं वहाँ भी नहीं हूँ।

तो फिर कहाँ हूँ? आगे कह रहे हैं—

**खोजी होय तुरत मिल जाऊँ, एक पल की तलाश में।
कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, सब स्वाँसों की स्वाँस में ॥**

कह रहे हैं कि यदि सच्चे खोजी बनकर खोज करो तो एक पल की तलाश में मिल सकता हूँ। मैं तो हर स्वाँस में समाया हुआ हूँ। यानी स्वाँसों में ही आत्मा का वास है और आत्मा में ही उसका वास है।



ब्रह्म रूप न काहू चीन्हा

परमात्मा के विषय में हमारे धर्म-शास्त्रों में बड़ा मतभेद रहा है। संसार का सबसे पुराना ग्रंथ वेद माना जाता है। चार वेदों से ही छः शास्त्र बने, छः शास्त्रों से 18 पुराण और 18 पुराणों से 128 उपनिषद बने। सबसे पहले वेदों की तरफ चलते हैं। साहिब ने सबकी बात की, सबका सार बताया। तो समझा रहे हैं—

**प्रथम कहै ऋग्वेद बखानी। निराकार परमेश्वर मानी॥
निरलेपों सो अलख अगोचर। निरालंब सो जान ब्रह्मबर॥**

यानी ऋग्वेद कह रहा है कि परमात्मा निराकार है, निर्लेप है, इंद्रियों से दिखाई नहीं देता।

**द्वितीय अथर्वन भाषत होई। निरालंब निर्लेप न कोई॥
नहिं निर्गुण नहिं सर्गुण कहेऊ। जो कोई मरा मुक्त सो भैऊ॥
जैसे पत्र वृक्ष से टूटा। फेर न सो तरुवर में जूटा॥
ऐसो जीव मरा यकवारा। बहुरि नहीं ताते तन धारा॥**

अथर्ववेद कह रहा है, वो न सगुण है, न निर्गुण, जो मरा, वो मुक्त हो गया, जैसे वृक्ष से जो पत्ता टूट गया, वो वापिस नहीं लग सकता, ऐसे ही जो मरा, वो फिर कभी शरीर में नहीं आयेगा, वो मुक्त हो गया। इस तरह अथर्ववेद कर्म को ही सब कुछ मान रहा है।

**तृतीय यजुर अस कहे बहोरी। इन दोनों की मति भई भोरी॥
सर्गुण ब्रह्म नारायण होई। क्षीर समुद्र शयन कर सोई॥**

तो यजुर्वेद ईश्वर को सगुण कह रहा है।

चौथे साम कह पुनि मत अपना। यहै सब जानो झूठ कल्पना॥
नहिं सगुण नहिं निरगुण देवा। नहीं दृष्टि गोचर को भेवा॥
संपूर्ण है ब्रह्म अखंडा। तत्त्वमसी अद्वैत से मंडा॥

सामवेद आत्मा को ही परमात्मा कह रहा है। तो इस तरह कोई परमात्मा को सगुण, कोई निर्गुण कह रहा है। कोई आत्मा को ही परमात्मा कह रहा है तो कोई कर्म को परमात्मा बोल रहा है। जब ये परमात्मा के विषय में स्पष्ट नहीं हैं तो आम आदमी कैसे जानेगा। ये उलझन मनुष्य को आरंभ से ही रही, इसलिए तो निरंतर एक खोज में रहा है। तो वेदों से छः शास्त्र बने। इनके रचयिता बड़े बड़े महान ऋषि हुए, उनका मत भी आपस में एक नहीं हुआ। थोड़ा इन्हें भी देखते हैं। साहिब कह रहे हैं—

प्रथम मीमांसा शास्त्र आचारी। कर्म थापि निजु ज्ञान उचारी॥
भूत भव्य ब्रत मानिक जोई। कर्म अधीन जान सब सोई॥
अज हरि हर सनकादिक जेते। कर्म अधीन जान सब तेते॥
कर्म अधीन ज्ञान अरु योगा। सो जस करे भोग तस भोगा॥
कर्म स्वतंत्र सर्व परगावै। जो जस करै सो तस फल पावै॥

यजुर्वेद से जैमिनी ऋषि ने मीमांसा शास्त्र की उत्पत्ति की। वो कर्म को स्थापित कर रहा है। देखो, दूसरा क्या कह रहा है—
द्वितीय बाद वयशेष वदंता। कर्म नहिं जानिये सुतंता॥
कर्म तो काल कि बस में होई। काल पाय कर्म करै न कोई॥
ताते यह निश्चय करि मानो। कर्म काल की वश में जानो॥
कालहि ब्रह्म और नहिं कोई। काल पाय अज हरि हर होई॥
काल पाय पुनि सो बिनसाही। उत्पत्ति प्रलय काल वश आही॥
ताते काल सत्य करि मानी। कर्म असत्य वैशेषिक वानी॥
वैशेषिक शास्त्र कह रहा है कि कर्म काल के वश हैं, इसलिए काल बड़ा

है, काल ही ब्रह्म है।

तृतीय न्याय जिन मत अर्थाई। काल है छीन छीन है जाई॥
घटि बढि जाय काल की बातें। काल कर्म नास्ती दोउ ताते॥
अस्ति एक परमात्म आही। तीन काल आवै अरु जाही॥
निजु वश ईश्वर काल को धरई। जब जस चाहे तब तस करई॥
ग्रीष्म वर्षा काल बनावै। वर्षा को ग्रीष्म दिखलावै॥
चाहे रंक राव करि द्वारी। भूपति को पुनि करे भिखारी॥
सकल सूत्रधर ईश्वर ऐसे। नाचे जग कठपुतली जैसे॥
ताते परमेश्वर है अस्ती। काल वो कर्म सुभाव है नास्ती॥

न्याय शास्त्र कह रहा है, काल तो घटता बढ़ता रहता है और आता जाता रहता है, इसलिए कर्म और काल दोनों नाशवान हैं। ये दोनों ईश्वर के वश में हैं। वो जब चाहे, जो चाहे, वही करता है। सारे जग को ईश्वर कठपुतली की तरह नचा रहा है। जैसे कठपुतली को नचाने वाला पर्दे के पीछे रहता है, दिखाई नहीं देता, ऐसे ही जगत को नचाने वाला ईश्वर भी दिखाई नहीं देता। यानी वो निराकार है। तो न्यायशास्त्र उसे निराकार बता रहा है।

चौथे पतंजलि कह यह लेखा। कहो कहाँ तुम ईश्वर देखा॥
तुम नहिं जौं ईश्वर लखिपाई। तो पुनि कैसे ताहि बताई॥
पीतर पाथर प्रथमा पूजो। अनुमानहि मन में सूजो॥
यह सब झूठ भरम को फँदा। आत्म शुद्ध सच्चिदानन्दा॥
सो हम योग मार्ग ते जाना। तुमको नहिं कुछ अनुभव ज्ञाना॥
तुम प्रतिमा पूजो यहि लेखे। हम ब्रह्माण्ड पिंड में देखे॥
तुम हो झूठे हम हैं साँचे। ईश्वर की अनभौ तुम काचे॥
ताते योग सत्तकरि जानो। और सकल झूठा करि मानो॥

पतंजलि शास्त्र योग को महत्व दे रहा है, कह रहा है कि पूरा ब्रह्माण्ड पिंड में है, योग करो और देखो। बाहरी पूजा को पतंजलि

बेकार बता रहा है। यह शास्त्र आत्मा को ही परमात्मा मान रहा है और उसकी प्राप्ति का साधन योग बता रहा है।

पंचम सांख्य पती अस बोलो। तुम सब मिथ्या भ्रमयुत डोलो॥
यकदेशी अनुभव अरु ज्ञाना। सो कछु काम को नहीं बखाना॥
ब्रह्म सर्व देशी कह सोई। साक्षी सर्व अकर्ता होई॥
सब करतूत प्रकृती ठाना। योग समाध साधना नाना॥
उतपति अस्थित परलय कर्मा। सो सबही प्रकृत के धर्मा॥
पाँचों तत्व पचीस प्रकृती। चारों देह आदि सब नास्ती॥
ईश्वर को जो जाननहारा। सर्वसाक्षि से आस्ति पुकारा॥
ये सब अनित्त में नित्त को आस्ती। योग आदि सब मिथ्या नास्ती॥

सांख्य शास्त्र कह रहा है कि ईश्वर अकर्ता है, निर्लेप है। दूसरी ओर प्रकृति ही सबकुछ करती है और प्रकृति नाशवान है। इस तरह अच्छा बुरा जो भी हो रहा है, सब माया है। इस माया से अपने ध्यान को हटा लो तो ज्ञान द्वारा परमात्मा को पा लोगे।

छठे वेदान्ती ऐसे कहई। मिथ्यावाद सकल यह अहई॥
एक अखंड ब्रह्म है जोई। तामें अस्ति नास्ति नहिं कोई॥
आप आप सम्पूर्ण व्यापा। भ्रमकारी त्रिकुटी तामें थापा॥
ध्याता ध्यान ध्येय नहिं कोई। ज्ञाता ज्ञान होय नहिं जोई॥
ब्रह्म अखंड अद्वैत एकरस। ताते द्वैत भाष भाषे कस॥
नित्य नित्य समाधि है जोई। तामें सो संभववै न कोई॥
देखन अरु देखन में आये। देखनहार ब्रह्म बतलाये॥
ब्रह्म ते इतर और न कोई। नास्ति और सब मिथ्या होई॥

वेदान्त कह रहा है कि वो ईश्वर ही सब जगह स्वयं व्याप्त है, उसके अलावा दूसरा कोई नहीं है। इस तरह वेदान्त आत्मा को ही परमात्मा स्वीकार कर रहा है।

तो इस तरह वेद शास्त्रों का ही आपस में एक मत नहीं हो रहा है। साहिब कह रहे हैं—

षट्शास्त्र मिल झगड़ा कीन्हा। ब्रह्म रूप काहू न चीन्हा॥

साहिब ने वेदों की पहुँच से परे की बात कही-

वेद हमारे भेद है, हम वेदन के माहिं ।

जौन भेद में मैं बसों, वेदो जानत नाहिं ॥

कहा कि जहाँ की बात मैं कर रहा हूँ, उसका रहस्य वेद भी नहीं जानते हैं। यानी ये अज्ञान में हैं परमात्मा के सही एड्रेस के विषय में। तभी तो ये उलझने आई और यही उलझने मनुष्य को विरासत में मिलीं। मानव भटकता रहा, क्योंकि सही एड्रेस किसी ने नहीं बताया। साहिब ने ऐसे ही नहीं कहा-

वा घर की सुधि कोई न बतावे, जहवाँ से हंसा आया है ॥

देखो, कितनी उलझन है इनकी आपस में। स्वयं भी उलझन में है हरेक। कोई कुछ अनुमान लगा रहा है, कोई कुछ, पक्का कोई है नहीं। इन सबके तर्क आपस में एक नहीं हो रहे हैं। जो विश्वास के साथ कह रहा है, उसमें भी सार नजर नहीं आ रहा है, तर्क दिखाई नहीं दे रहा है। इसलिए वेद एक स्थान पर कह रहा है-नेति, नेति, नेति। निराकार की ओर इशारा करके कह रहा है कि उसका भी पूरा भेद नहीं पा रहा हूँ और उसके आगे तो मुझे कुछ पता नहीं।

वेद निरंजन ने बनाए, इसलिए उसमें अपने तक का ज्ञान दिया, वो भी पूरा नहीं, आगे की बात नहीं बताई। मनुष्य को सत्य के ज्ञान से वंचित रखा। फिर आगे ऋषियों ने उस ज्ञान के आधार पर साधनाएँ की, कोई कहीं तक पहुँचा, कोई कहीं तक, कोई निरंजन तक भी नहीं पहुँच पाया। इसलिए कुछ जो निरंजन तक पहुँचे, उन्होंने वेदों से ही शास्त्र पुराण आदि बनाए। कुछ जो वहाँ तक भी नहीं पहुँचे, उन्होंने भी प्रयास किया, निरंजन का पूरा भेद किसी को नहीं मिला, इसलिए सबने निरंजन को ही अंतिम सत्य माना। कुछ ने केवल कल्पना ही कर ली। वेद पढ़कर अर्थ निकाले। चाहे सही निकाले, चाहे गलत, निरंजन से आगे तो कल्पना भी न कर सका। इसलिए साहिब ने कहा-

धर्म शास्त्र मिल झगड़ा कीना। ब्रह्म रूप काहू न चीह्ना ॥

साहिब ने अमर लोक का रहस्य दिया, परम पुरुष की बात कही।

बिन पावन की राह है, बिन बस्ती का देश।

बिना पिंड का पुरुष है, कहैं कबीर संदेश॥

कहा कि उसका कोई पंच भौतिक शरीर नहीं है यानी वो सगुण परमात्मा नहीं है, पर वो निर्गुण, निरंजन भी नहीं।

यदि वो निराकार, निरंजन भी नहीं है तो आखिर में दर्शन किसका करना है। इसलिए-

हम तो लखा तिहुँ लोक में, तुम क्यों कहा अलेख।

सार शब्द जाना नहीं, धोखे पहिरा भेख॥

बेचूने जग राँचिया, साहिब नूर निनार।

आखिर केरे वक्त को, किसका करै दीदार॥



मैं निरंजन

मैं ही अमरधाम परमपुरुष का पंचम शब्द पुत्र हूँ।

मैं ही विमूढ़ वरदान लेकर, परमपुरुष से शापित हूँ।

मैं ही आद्यशक्ति-सह-हँसों को ले कालपुरुष कहाता हूँ।

मैं ही निरंजन अमरधाम के मानसरोवर से निष्कासित हूँ।

मैं 'मन' ही आत्मरूप तीन लोक में वासित हूँ॥

मैं 'मन' ही सृष्टि से परे रारंकार हूँ॥

मैं ही साकार निराकार में विद्यमान हूँ॥

मैं 'मन' सकल सृष्टि का करतार हूँ॥

मैं ही शून्य मण्डलों से परे घनघोर अंधकार हूँ॥

मैं 'मन' ही जन्म-मरण के कर्म बनाता हूँ॥

मैं ही देव और दानवों का कर्ता जग संचालक हूँ॥

योगमत में काल पुरुष की निर्गुण भक्ति में ध्यान साधना के शब्द

1. **चाचरी मुद्रा**—इस में योगी दोनों आंखों के मध्य छिद्र में ध्यान रोकता हुआ **ज्योति निरंजन** शब्द का जाप करता है। इस शब्द से अग्नि तत्व उत्पन्न हुआ। कंटरौल करता अग्नि देवता।

2. **भूचरी मुद्रा**—इस में योगी ओम (**ओंकार**) का जाप करता हुआ आज्ञा चक्र में ध्यान रोकता है। इस शब्द से जल तत्व उत्पन्न हुआ। कंटरौल करता जल देवता।

3. **अगोचरि मुद्रा**—इस में **सोहंग शब्द** का जाप होता है और ध्यान अनहद धुनों में रखा जाता है। इस शब्द से वायु तत्व पैदा हुआ। कंटरौल करता पवन देवता।

4. **उनमुनि मुद्रा**—इसमें योगी अद्भुत प्रकाश देखता और **सत् शब्द** का जाप करता है। जिससे पृथ्वी तत्व पैदा हुआ। कंटरौल करता पृथ्वी का देवता।

5. **खेचर मुद्रा**—इस मुद्रा में **रंरकार** का जाप करता हुआ योगी दसवें द्वार में चला जाता है। इस से अकाश तत्व की उत्पत्ती हुई। यहां का देवता काल पुरुष निराकार निरंजन है जो चार तत्व को कंटरोल करता है। सभी देवी-देवते इसका परिवार है। यही मन रूप में बनकर सभी में समाया हुआ है।

इन पांचों मुद्राओं को सन्तों ने योगमत बताया और संतमत इससे अलग व आगे बताया।

पांच शब्द और पांचों मुद्रा, सोई निश्चय कर माना।

इसके आगे पुरुष पुरातन उसकी खबर न जाना।।

—साहिब कबीर जी

खेचरि भूचरि साथै सोई। और अगोचरि उनमुनि जोई।।

उनमुनि बसै अकास के माहीं। जोगी बास करे तेहि ठाहीं।।

ये जोगी गति कहा पसारा। संत मता पुनि इन से न्यारा।।

जोगी पांचौ मुद्रा साथै। इंडा पिगला सुखमनि बाँधै।।

—तुलसी साहब हाथरस वाले

आवे न जावे मरे न जन्मे

साहिब ने परम-पुरुष रूपी सच्चे प्रियतम की बात कही। दुनिया कह रही है कि वो अवतार धारण करके संसार में आता है, पर साहिब कह रहे हैं—

दशरथ कुल औतर नहीं आया। नहीं लंका के राव सताया॥
पृथ्वी रमण धमन नहीं करिया। पैठि पाताल न बलि छलिया॥
...ई सब काम साहिब के नाहीं। झूठ कहै संसारा॥

ये सब काम साहिब के नहीं हैं, निरंजन के हैं। साहिब किसी से छल नहीं करता। वो किसी को नहीं मारता।

है दयाल द्रोह न वाके, कहु कौन को मारा॥

यह सारा पसार उसी का है।

जन्म मरण से रहित है, मेरा साहिब सोय।
बलिहारी उस पीव की, जिन सिरजा सब कोय॥

कोई पारखी ही उसे समझ सकता है। वो परम-पुरुष ही आत्मा का सच्चा प्रियतम है। साहिब कह रहे हैं—

आवै न जावै मरे नहिं जनमे, सोई निज पीव हमारा हो।
ना कोई जननी ने जन्मो, ना कोई सिरजनहारा हो॥
साध न सिद्ध मुनि ना तपसी, ना कोई करत अचारा हो।
ना षट दर्शन चार वर्ण में, ना आश्रम व्यवहारा हो॥
ना त्रिदेवा सोहं शक्ति, निराकार से पारा हो।
शब्द अतीत अचल अविनाशी, क्षर अक्षर से न्यारा हो॥

ज्योति स्वरूप निरंजन नाहीं, ना ओम हंकारा हो ।
 धरति न गगन पवन ना पानी, ना रवि चंद न तारा हो ॥
 है प्रगट पर दीसत नाहीं, सतगुरु सैन सहारा हो ।
 कहैं कबीर सब घट में साहिब, परखो परखनहारा हो ॥

शब्दों की तरफ ध्यान दें। कह रहे हैं कि जो हमारा सच्चा प्रियतम है, वो जन्म-मरण से परे है, संसार में आता-जाता नहीं यानी वो माता के पेट से अवतार धारण करके नहीं आता। उसका कोई माता-पिता नहीं है और न ही उसे किसी ने बनाया है। वो न सिद्ध है, न साधु, न तपस्वी और न ही वो संसार के आचार करता है। वो इनमें से भी कोई नहीं है और षट्-दर्शन, चार वर्ण आदि से भी परे है। वो चार आश्रम से भी परे है यानी वो न जवान होता है, न बूढ़ा होता है, न वो बच्चा है। उसकी कोई उम्र नहीं है। वो त्रिदेव में से कोई भी नहीं है; वो सोहं भी नहीं है; वो शक्ति भी नहीं है। वो तो निराकार से भी परे है। वो शब्द (निःशब्द शब्द) स्वरूपी अचल और अविनाशी है। वो माया और ब्रह्म से भी न्यारा है। वो **ज्योति-स्वरूप** निरंजन भी नहीं है और '**ओम**' भी नहीं है। वो धरती, आकाश, हवा, पानी आदि तत्वों से भी कोई नहीं है और सूर्य, चाँद, तारों से भी परे है। वो सबमें है, पर दिखाई नहीं देता। सद्गुरु के शब्द ही उसका बोध दे सकते हैं। वो साहिब तो सबके घट में रहने वाला है। कोई पारखी ही उसे परख सकता है।

इस शब्द में बहुत बड़ा रहस्य साहिब ने बोल दिया। जब सच्चे गुरु की बात आती है तो कुछ लोग कहते हैं कि एक गुरु किया है तो अब उसे छोड़कर दूसरे के पास जाना तो अपने पति को छोड़कर दूसरे पति के पास जाना हुआ। यहाँ पर विचार करें कि क्या आप अपने पति (सच्चे परमात्मा, साहिब) की भक्ति कर रहे हैं या पराए की! साहिब ने त्रिदेव, सिद्ध, मुनि, निराकार ब्रह्म, साकार ईश्वर, ओम आदि सबसे परे बता दिया। इनमें से किसी को भी जीव का अपना सच्चा पति नहीं कहा।

इसका मतलब है कि दुनिया सच्चे पति की भक्ति नहीं कर रही है और जो गुरु पराए पति की ओर ले जा रहा है, जो उसे उसके प्रियतम से नहीं मिला सकता है, उसी की शरण में रहना चाहती है, उसे छोड़कर सच्चे गुरु के पास नहीं आना चाहती है और कहती है कि अपने पति को छोड़कर दूसरे के पास नहीं जाना है। अपना पति कौन है, यही मालूम नहीं है। यहीं पर भूल हो रही है। बाकी यह कहना कि अपने पति को छोड़कर पराए पति की तरफ नहीं जाना है, यह बात तो बड़ी अच्छी है। पर सत्य यह है कि अपने पति को नहीं पहचान पा रही है। दादू दयाल तो कह रहे हैं—

पुरुष हमारा एक है, हम नारी बहु अंग॥

उस एक परम-पुरुष रूपी सच्चे पति को कोई नहीं जान पा रहा है, जो संसार के जन्म मरण के क्रम से नितान्त परे है।



जब तक गुरु मिले नहीं साँचा।

तब तक गुरु करो दस पाँचा॥

सार नाम छाड़ि के करै आन की आस।

ते नर नरकै जाहिंगे सत्य भाषे रैदास॥

स्वप्न से परे सत्य सत्य रूप भूष है

चन्द्र सूर्य भास स्वप्न, पंच में प्रपंच स्वप्न,
स्वर्ग औ नर्क बीच बसै सोऊ स्वप्न रूप है ।

चाँद और सूर्य का आभास भी स्वप्न है । जो स्वर्ग और नरक में रहने वाले हैं, वो भी स्वप्न में रह रहे हैं । वास्तव में जिस अवस्था में आप बैठे हैं, वो भी स्वप्न है ।

ओहं औ सोहं स्वप्न पिण्ड और ब्रह्माण्ड स्वप्न,
आत्मा परमात्मा स्वप्न रूप सो अरूप है ॥

वाह, आत्मा-परमात्मा भी स्वप्न है । क्योंकि जब हंसा में मन समाया तो आत्मा कहा गया । मन के मिश्रण के बाद जीव नाम पड़ा, इसलिए यह शुद्ध चेतन सत्ता नहीं, इसलिए स्वप्न कहा । और परमात्मा निरंजन को कहते हैं । वो भी स्वप्न है ।

जरा मृत्यु काल स्वप्न, गुरु शिष्य बोध स्वप्न,
अक्षर निःअक्षर आत्मा स्वप्न रूप है ।

यह भी इंद्रियों और मन तक पहुँच है । लेकिन सद्गुरु स्वप्न नहीं है, क्योंकि वो तत्त्व सुरति में है । आगे साहिब कह रहे हैं—

कहत कबीर सुन गोरख वचन मम,
स्वप्न से परे सत्य सत्य रूप भूष है ।
सोई सत्यनाम सत्यलोक बीच वासा करे,
नहीं कहूँ आवे नहीं जावे सत्यरूप है ॥

वो सत्यनाम ही सत्य है, क्योंकि उसका वास उस अमर-लोक में है, जो कभी नष्ट नहीं होता । वहाँ मन का वजूद नहीं है, वहाँ मन की इच्छा नहीं है, वो मन की सीमा से बाहर है, इसलिए उसे सत्य कहा ।



परम पुरुष तब गुप्त रहाये

संतों ने जिसे 'साहिब' कहकर पुकारा है, वो साहिब ही हमारा परमात्मा है। वो ही हमारा प्रियतम है।

एक बार धर्मदास जी ने अमर-लोक तथा सृष्टि-उत्पत्ति के विषय में जानने की इच्छा से कबीर साहिब से प्रार्थना करते हुए पूछा - अब साहिब मोहि देउ बताई। अमर-लोक सो कहां रहाई ॥ कौन द्वीप हंस को वासा। कौन द्वीप पुरुष रह वासा ॥ तीन लोक उत्पत्ति भाखो। वर्णहुसकल गोय जनि राखो ॥ काल-निरंजन किस विधि भयऊ। कैसे षोडश सुत निर्मयऊ ॥ कैसे चार खानि बिस्तारी। कैसे जीव कालवश डारी ॥ त्रय देवा कौन विधि भयऊ। कैसे महि आकाश निर्मयऊ ॥ चन्द्र सूर्य कहु कैसे भयऊ। कैसे तारागण सब ठयऊ ॥ किस विधि भई शरीर की रचना। भाषो साहिब उत्पत्ति बचना ॥

हे साहिब ! कृपा करके अब मुझे बताओ कि वह अमर-लोक कहाँ है ? उस अमर-लोक में हंस किस स्थान पर रहते हैं ? तीन लोक की उत्पत्ति कैसे हुई ? काल-पुरुष कैसे हुआ ? सोलह पुत्र कैसे बने ? यह निर्मल आत्मा चार खानियों में कैसे गयी ? आत्माएँ काल-पुरुष के चंगुल में कैसे फँस गयीं ? त्रिदेव कैसे बने ? पृथ्वी और आकाश कैसे बने ? शरीर की रचना कैसे हुई ? हे साहिब ! कृपा करके मुझे सृष्टि की उत्पत्ति का सारा भेद समझाकर कहिए। तब धर्मदास को अधिकारी जानकर कबीर साहिब ने फरमाया-

तब की बात सुनहु धर्मदासा। जब नहिं महि पाताल अकाशा ॥ जब नहिं कूर्म बराह और शेषा। जब नहिं शारद गोरि गणेश। जब नहिं हते निरंजन राया। जिन जीवन कह बांधि झुलाया ॥

तैतिस कोटि देवता नाहीं। और अनेक बताऊं काहीं॥
ब्रह्मा विष्णु महेश ने तहिया। शास्त्र वेद पुराण न कहिया॥
तब सब रहे पुरुष के माहीं। ज्यों बट वृक्ष मध्य रह छाहीं॥

हे धर्मदास! मैं तब की बात कह रहा हूँ, जब धरती और आकाश नहीं थे; जब कूर्म, शेष, बाराह, शरद, गोरी, गणेश आदि कोई भी न था; जब जीवों को कष्ट देने वाला निरंजन भी न था; जब तैतीस करोड़ देवता भी न थे... और अधिक क्या बताऊँ ? ब्रह्मा, विष्णु और महेश न थे। वेद, शास्त्र, पुराण आदि भी न थे। लेकिन वह एक था।

कबीर साहिब कहते हैं कि प्रारम्भ में सत्य-पुरुष गुप्त थे। उनका कोई साथी-संगी नहीं था। वे कभी बने नहीं हैं और न ही मिटेंगे।

जिस किसी वस्तु का सृजन होता है, वह अन्ततः नष्ट भी अवश्य हो जाती है। लेकिन जो परम-पुरुष कभी बना ही नहीं, वह मिट कैसे सकता है! साहिब धर्मदास से कहते हैं कि साकार, निराकार, लोक-लोकान्तर आदि सब बाद में बने; अतः गवाही किसकी दूँ! चारों वेद भी सत्य पुरुष की कहानियाँ नहीं जानते और निराकार अर्थात् काल-पुरुष तक की बात ही कहते हैं।

वेद चारों नहीं जानत, सत्यपुरुष कहानियाँ॥



पलटू कहै साँच कै मानो। और बात झूठ कै जानो॥
जहवाँ धरती नाहिं अकासा। चाँद सूरज नाहिं परगासा॥
जहवाँ ब्रह्मा विष्णु न जाहीं। दस अवतार न तहाँ समाहीं॥
आदि जोति ना बसै निरंजन। जहवाँ शून्य शब्द नहिं गंजन॥
निरंकार ना उहाँ अकारा। अक्षर शब्द नहिं विस्तारा॥
जहवाँ जोगी जाए न पावै। महादेव ना तारी लावै॥
जहवाँ हृद अनहृद नहिं जावै। बेहृद वहाँ रहनी ना पावै॥
जहवाँ नाहिं अग्नि परगासा। पाँच तत्व ना चलता स्वाँसा॥

हतै गुप्त प्रभु प्रकट होय आए

धरती, आकाश, ब्रह्माण्ड, निरंजन, त्रिदेव आदि की उत्पत्ति के विषय में बताते हुए साहिब फरमाते हैं कि सर्वप्रथम परम-पुरुष ने इच्छा करके एक शब्द पुकारा, जिससे एक अद्भुत श्वेत रंग का प्रकाश हुआ और वह अद्भुत प्रकाश अनन्त में फैल गया। वह प्रकाश सांसारिक प्रकाश की भांति न था, वह इतना अद्भुत था की जिसका एक-2 कण करोड़ों सूर्यों को भी लज्जा दे।

जब वह प्रकाश अनन्त में फैल गया तो फिर वे सत्य-पुरुष स्वयं उस प्रकाश में समा गये। अब वह प्रकाश चेतन हो गया, जीवित हो गया। जिस प्रकार आत्मा के शरीर में आने से शरीर चेतन हो जाता है। उसी तरह वह प्रकाश भी जीवित हो उठा।

प्रकाश में आने से पहले वे सत्य-पुरुष अगम थे, गुप्त थे जबकि प्रकाश में आकर ही वे सत्य-पुरुष कहलाए और वह अद्भुत प्रकाश, जो स्वयं सत्य-पुरुष ही थे, अमर-लोक कहलाया।



नोट — अमरलोक को ही सन्तों ने सत्यलोक, अमरलोक, बेगमपुरा, परम पुरुष, अनिवाशी पुरुष ज्ञानी पुरुष और साहिब कहा :

अंश अलग किये

अभी भी सत्य-पुरुष अकेले ही थे। फिर उनकी मौज हुई और उन्होंने उस प्रकाश को अर्थात् अपने ही स्वरूप को अपने में से छिटका दिया। अनन्त बिन्दुएँ हुईं, जो वापिस उस अद्भुत अनन्त प्रकाश में आयी। जिस प्रकार समुद्र में से पानी को मुट्ठी में या हाथों में भरकर उछालने से कई कण बिखर जाते हैं, उसी तरह उस प्रकाश में से भी अनेक कण बिखर गये। लेकिन जिस प्रकार समुद्र की बूँदें पुनः समुद्र में गिर, समुद्र का ही रूप हो जाती हैं, उसी तरह वे अनन्त कण भी वापिस उस अद्भुत प्रकाश में आए; लेकिन अचरज यह था कि वे बिन्दुएँ जब वापिस प्रकाश में आयीं तो वे प्रकाशमय नहीं हुईं, क्योंकि सत्य-पुरुष ने इच्छा की कि इनका अपना अलग अस्तित्व भी रह जाए। वे ही अन्ध (आत्माएँ) कहलाये। वे सब आत्माएँ उसी अद्भुत प्रकाश में विचरण करने लगे।

आत्माओं का उस प्रकाश में अलग अस्तित्व के साथ विचरण करना बड़े अचरज की बात थी क्योंकि समुद्र की बूँदों का समुद्र में अपना अलग अस्तित्व नहीं होता। जिस तरह पानी में मछली घूमती रहती है, उसी तरह सब आत्माएँ उस प्रकाश में घूमने लगे। ये देख परम-पुरुष बड़े खुश हुए और उन आत्माओं से बहुत प्यार करने लगे। बहुत समय ऐसे व्यतीत हो गया और सभी आत्माएँ उस अद्भुत प्रकाश में विचरण करते हुए परम-आनन्द लूट रहे थे। 'सदा आनन्द होते हैं वा घर, कबहु न होत उदासा।'

वहाँ उस अमर-लोक में आत्मा का प्रकाश 16 सूर्य का है और परम-पुरुष के मात्र एक रोम का प्रकाश ही करोड़ों सूर्य तथा चन्द्रमा को लज्जा देने वाला है। अतः जब परम-पुरुष के एक रोम की ऐसी महिमा है तो फिर वह परम-पुरुष स्वयं कैसा होगा, इसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती।



शब्द पुत्र उत्पन्न किये

फिर परम-पुरुष ने शब्दों से पुत्र उत्पन्न किये अर्थात् जो बोलते जा रहे थे, वह पुत्र बन रहा था। जैसे ही परम-पुरुष ने इच्छा करके दूसरा शब्द पुकारा तो 'कूर्म' उत्पन्न हुआ। इसी तरह तीसरे शब्द से 'ज्ञान' और चौथे शब्द से 'विवेक' उत्पन्न हुआ।

परम-पुरुष ने सोचा कि मैं जो बोल रहा हूँ, वह सब पैदा हो रहा है, तो क्यों न एक अपने जैसा भी बना दूँ! अतः इस बार परम-पुरुष ने एक और परम-पुरुष बनाने की इच्छा से तीव्र आवाज़ में शब्द पुकारा। यह शब्द परम-पुरुष ने थोड़ी संशय में पुकारा। इस शब्द से 'मन' (निरंजन) हुआ। परम-पुरुष तब यह जानने के लिए कि क्या उनके द्वारा उत्पन्न पाँचवाँ शब्द पुत्र उनके जैसा ही है या नहीं, उस समय परम-पुरुष उसमें समाए। परम-पुरुष को एक क्षण के लिए शंका आई कि यह तो मेरा शरीर नहीं है और अपने को वहाँ से खींचकर अपने शरीर में लाए। फिर परम-पुरुष ने छठा शब्द पुकारा तो उससे 'सहज' की उत्पत्ति हुई। सातवें शब्द से 'संतोष', आठवें से 'चेतना', नौवें से 'आनन्द', दसवें से 'क्षमा', ग्यारहवें से 'निष्काम', बारहवें से 'जलरंगी', तेहरवें से 'अचिन्त' चौदहवें से 'प्रेम', पन्द्रहवें से 'दीन-दयाल', तथा सोलहवें शब्द से 'धैर्य', उत्पन्न हुआ। उस अमर-लोक की शोभा को बढ़ाने के लिए ही परम-पुरुष ने इन शब्द पुत्रों को उत्पन्न किया। ये सभी उसी अमर-लोक में विचरण करने लगे।

ये सब परम-पुरुष के शब्द पुत्र थे, जिन्हें परम-पुरुष ने इच्छा से पैदा किया, लेकिन आत्मा इच्छा से नहीं बनी। आत्मा तो परम-पुरुष का ही अंश है।



पाँचवें पुत्र को तीन लोक का राज्य दिया

आत्माएँ को उस अमर-लोक में विचरण करते हुए बहुत समय बीत गया। उसके पश्चात् पाँचवां पुत्र 'निरंजन' ध्यान करने लगा। उसने 70 युग तक एकाग्रचित होकर परम-पुरुष का ध्यान किया। परम-पुरुष सेवा से प्रसन्न हुए और पूछा कि इतना घोर तप क्यों कर रहे हो? निरंजन ने कहा कि मुझे भी कहीं थोड़ा सा स्थान दे दो। परम-पुरुष ने तब निरंजन को मानसरोवर स्थान दिया (मानसरोवर अमर-लोक का ही एक द्वीप है)। मानसरोवर पहुँच कर निरंजन बड़ा खुश हुआ और आनन्द से वहाँ रहने लगा। लेकिन कुछ ही समय बाद पुनः परम-पुरुष का ध्यान करने लगा। निरंजन ने पुनः 70 युग तक परम-पुरुष का ध्यान किया। परम-पुरुष ने सेवा से प्रसन्न होकर पूछा कि अब क्या चाहते हो?

निरंजन—

इतना	ठांव	न	मोहि	सुहाई।
अब	मोहि	बकसि	देहहु	ठकुराई॥
कै	मोहि	देहु	लोक	अधिकारा।
कै	मोहि	देहु	देश	इक न्यारा॥

निरंजन ने कहा — “मैं इतने से खुश नहीं हूँ। अब कृपा करके या तो इस अमर-लोक का राज्य ही मुझे दे दो या फिर एक अलग से न्यारा देश दो, जिस पर मेरा पूरा अधिकार हो, जहाँ मैं स्वतन्त्र रूप से

बिना किसी रोक-टोक के अपना कार्य कर सकूँ।”

परम-पुरुष ने तब निरंजन से कहा कि तुम्हारे बड़े भाई कूर्म के पास पाँच तत्त्व का बीज (जो सूक्ष्म रूप में था) है। तुम उसके पास जाकर प्रार्थना करना और पाँच तत्त्व का बीज ले लेना। उससे तुम शून्य में तीन-लोक बनाना। जाओ! तुम्हें 17 चौकड़ी असंख्य युग का राज्य देता हूँ।

निरंजन कूर्म जी के पास पहुँचा, लेकिन कूर्म जी से प्रार्थना नहीं की, और बल से पाँच तत्त्व का बीज उसी प्रकार उनसे छीन लिया, जैसे किसी के शरीर से खून खींचकर निकालते हैं। कूर्म जी शांत थे, उन्होंने सोचा कि यह कौन शैतान यहाँ आ गया है! कूर्म जी ने तब परम-पुरुष से पुकार की, कहा — यह किस शैतान को यहाँ भेज दिया है! इसने तो मेरे साथ बल का प्रयोग करके पाँच तत्त्व का बीज छीना है। परम-पुरुष ने कूर्म जी से कहा कि तुम शांत रहो, यह तुम्हारा छोटा भाई है, इसे माफ़ कर दो। लेकिन परम-पुरुष ने सोचा कि यह कैसा निरंजन उत्पन्न हुआ है!

पाँच तत्त्व का बीज लेकर निरंजन ने उससे पाँच तत्त्व (जल, अग्नि, वायु, पृथ्वी और आकाश) बनाए। जिस तरह कुम्हार मिट्टी से तरह-2 की वस्तुएँ बनाता है, उसी तरह निरंजन ने भी इन पाँच तत्त्वों से 49 करोड़ योजन पृथ्वी, सूर्य, चन्द्र, तारे, सप्त-पाताल, सप्त-लोक, सब बना दिया। ऐसे शून्य में कई दिन रहा, लेकिन आत्म देव नहीं थे, इसलिए यह निर्जीव सृष्टि थी। निरंजन ने सोचा कि यदि आत्माएँ ही नहीं हैं तो फिर सृष्टि का क्या लाभ! अतः उसने पुनः 64 युग तक परम-पुरुष का ध्यान किया। परम-पुरुष ने पूछा कि अब क्या चाहिए ?

निरंजन —

दीजै खेत बीज निज सारा ।।

निरंजन ने कहा — “मैंने तीन-लोक की रचना तो की है, लेकिन जीव ही नहीं हैं तो राज्य किस पर करूँ! इसलिए कृपा करके थोड़े से जीव मुझे भी दे दें, ताकि मैं उन पर राज्य कर सकूँ।”

परम-पुरुष ने तब इच्छा करके ऐसी कन्या (आद्य-शक्ति) की उत्पत्ति की, जिसकी आठ भुजाएँ थीं। आद्य-शक्ति ने परम-पुरुष को प्रणाम करते हुए पुछा कि उसे क्यों बनाया गया है? परम-पुरुष ने अनन्त आत्माएं देते हुए कहा कि हे पुत्री! मानसरोवर में निरंजन है, जिसने शून्य में तीन-लोक की रचना की है। तुम ये आत्माएं लेकर उसके पास जाओ और दोनों मिलकर शून्य में सत्य-सृष्टि करो (आत्माओं को योनियों में न लाकर अर्थात् शरीरों में न डालकर सत्य-सृष्टि करने की आज्ञा दी, जैसी कि अमर-लोक की सृष्टि थी)।



इच्छा कीन पुरुष तेहि बारा। अष्टंगी कन्या उपचारा॥
अष्ट बाहु कन्या होय आई। बायें अंग सो ठाढ़ रहाई॥
माथ नाई पुरुष सो कहई। अहो पुरुष आज्ञा कस अहई॥

अमर लोक से निरंजन को बाहर कर दिया

परम पुरुष की आज्ञा से जब आदि-शक्ति मानसरोवर में निरंजन के पास आई तो निरंजन उसके सौंदर्य को देखकर मोहित हुआ।

आवत कामिनि देख्यो जबही। धर्मराय मन हरष्यो तबही॥
कला अनन्त अंत कछु नहीं। काल मगन ह्वै निरखत ताही॥
निरखत धरम सु भयो अधीरा। अंग अंग सब निरख शरीरा॥
धर्मराय कन्या कह ग्रासा। काल स्वभाव सुनो धर्मदासा॥

जब निरंजन ने आदि-शक्ति को आते देखा तो बहुत खुश हुआ। आदि-शक्ति अनन्त कला और सौंदर्य से परिपूर्ण थी, सो काल पुरुष उसे देख मग्न हो गया, कामुक हो गया। उसने शक्ति को एक हाथ से पाँव और एक हाथ से शीश की तरफ से पकड़ा और निगल गया। तब से उसका नाम काल पुरुष अथवा काल निरंजन हुआ।

कीनो ग्रास काल अन्याई। तब कन्या चित विस्मय लाई॥
ततछन कन्या कीन्ह पुकारा। काल निरंजन कीन्ह अहारा॥

जैसे ही निरंजन ने उसे निगला, उसने परम पुरुष को पुकार की, कहा कि काल निरंजन ने मुझे खा लिया है।

तबही धर्म सहज लग आई। सहज शून्य तब लीन्ह छुड़ाई॥

फिर निरंजन सहज के पास गया और उसे भी वहाँ से भगा दिया, क्योंकि तप के कारण उसमें ताकत आ गयी थी।

पुरुष ध्यान कूर्म अनुसार। मोसन काल कीन्ह अधिकारा॥
तीन शीश मम भच्छन कीन्हो। हो सत्यपुरुष दया भल चीन्हो॥
यही चरित्र पुरुष भल जानी। दीन्हो शाप सो कहों बखानी॥
लच्छ जीव नित ग्रासन करहू। सवा लच्छ नित प्रति बिस्तरहू॥

परम पुरुष को ध्यान आया कि इसने पहले भी कूर्म का पेट फाड़कर पाँच तत्व का बीज निकाला था और अब इसने आद्य-शक्ति को निगल लिया है। परम पुरुष को बुरा लगा, उन्होंने निरंजन को शाप दे दिया, कहा कि एक लाख जीवों को तू रोज़ निगलेगा तो भी तेरा पेट नहीं भरेगा और सवा लाख को उत्पन्न करेगा।

पुनि कीन्ह पुरुष तिवान, तिहि छन मेटि डारो काल हो।

कठिन काल कराल जीवन, बहुत करइ बिहाल हो।

यहि मेटत सबै मिटिहैं, बचन डोल अडोलसां॥

परम पुरुष ने विचार किया कि मैं काल पुरुष को मिटा देता हूँ, क्योंकि यह तो जीवों को बड़ा कष्ट देगा, पर फिर ध्यान आया कि मैंने तो इसे 17 चौकड़ी असंख्य युग का राज्य दिया है, यदि मिटा दिया तो एक तो मेरा शब्द कट जायेगा और फिर सभी 16 पुत्रों को एक नाल में पिरोया है, यदि एक को भी मिटाया तो सभी मिट जायेंगे।

डोलै वचन हमार, जो अब मेटा धरम को।

वचन करो प्रतिपाल, देश मोर अब ना लहैं॥

उसे मिटाने से शब्द कट जाता था, इसलिए शाप दिया कि अब मेरे देश में नहीं आ सकेगा, मेरा दर्शन नहीं कर सकेगा।

जोगजीत कहँ तबहि बुलावा। धर्म चरित सब कहि समुझाया॥
जोगजीत तुम बेगि सिधारो। धर्मराय को मारि निकारो॥

मानसरोवर रहन न पावै। अब यह देस काल नहिं आवै॥
 धर्म के उदर माहिं है नारी। तासो कहो निज शब्द सम्हारी॥
 उदर फारि के बाहर आवे। कूर्म उदर विदार फल पावै॥
 धर्मराय सों कहो विलोई। वहै नारि अब तुम्हरी होई॥
 जाकर रहो धर्म वहि देशा। स्वर्ग मृत्यु पाताल नरेशा॥

परम पुरुष ने योगजीत (कबीर साहिब) को बुलाया। वास्तव में परम पुरुष स्वयं ही योगजीत हुए। उन्होंने स्वयं को मथ ज्ञानी पुरुष कबीर साहिब को निकाला और कहा कि निरंजन को मानसरोवर से निकाल दो, अब वो मेरे देश में नहीं आयेगा। उसके पेट में आद्य-शक्ति है, उससे कहना कि मेरा ध्यान करके उसके पेट को फाड़ बाहर आ जाए ताकि निरंजन ने जो कूर्म का पेट फाड़ा था, उसे उसका फल मिल जाए और निरंजन से कहना कि वो स्त्री अब तुम्हारी हो गयी, तुमने जहाँ स्वर्ग लोक, मृत्यु लोक और पाताल लोक की रचना की है, वहीं जाकर रहो, वहाँ के तुम राजा हो।

जोगजीत चल भे सिर नाई। मानसरोवर पहुँचे जाई॥
 जोगजीत को देखा जबहीं। अति भो काल भयंकर तबहीं॥
 पूछा काल कौन तुम आहू। कौन काज तुम यहाँ सिधाहू॥

परम पुरुष को प्रणाम कर योगजीत मानसरोवर में आए। जब निरंजन ने योगजीत को देखा तो बड़ा क्रोध किया, भयंकर हो गया, पूछा—कौन हो और यहाँ क्यों आए हो?

जोगजीत अस कहे पुकारी। अहो धर्म तुम ग्रासेहु नारी॥
 आज्ञा पुरुष दीन्ह यह मोही। इहिते बेगि निकारो तोही॥
 जोगजीत कन्या को कहिया। नारि काहे उदर महँ रहिया॥
 उदर फारि अब आवहु बाहर। पुरुष तेज सुमिरो तोहि ठाहर॥

योगजीत ने कहा कि तुमने आद्य-शक्ति को निगल लिया है, परम पुरुष की आज्ञा से मैं यहाँ आया हूँ, तुम्हें यहाँ से निकालना है। तब

आवे न जावे मरे न जन्मे सोई सत्यपुरुष हमारा है

योगजीत ने कन्या से कहा कि इसके पेट में क्यों बैठी हो, परम पुरुष की सुरति करके इसका पेट फाड़कर बाहर आ जाओ।

सुनिके धर्म क्रोध उर जरेऊ। जोगजीत सो सन्मुख भिरेऊ॥

जोगजीत तब कीन्हे ध्याना। पुरुष प्रताप तेज उर आना॥

पुरुष आज्ञा भई तेहि काला। मारहु सुरति लिलार कराला॥

जोगजीत पुनि तैसो कीन्हा। जस आज्ञा पुरुष तेहि दीन्हा॥

यह सुन निरंजन क्रोधित होकर लड़ने के लिए योगजीत के सम्मुख आया। योगजीत ने तब परम-पुरुष का ध्यान करके उनके तेज को लिया और निरंजन पर सुरति फेंकी, जिससे वो बेहोश होकर गिर पड़ा। गहि भुजा फटकार दीन्हों, परेउ लोक से न्यार हो॥ तब योगजीत ने उसकी भुजा पकड़कर उसे अमर लोक से नीचे शून्य में फेंक दिया।



बड़े बड़े सिद्ध साधक अटके। खरेजु स्याने ते सब भटके॥
निराकार निरंजन देवा। यही निरगुण की साधे सेवा॥
इनमें अटकि रहे सब ज्ञानी। यही वस्तु अगम सब जानी॥
जनम मरन छूटे नहीं जिवकी। खबर न पावे साँचे पिवकी॥
ओं ओंकार और है भाई। इसमें सकल रहे उरझाई॥
आगे भेद न पावे कोई। खोजत खोजत सब गये बिगोई॥
कहै कबीर गुप्त घर मेरा। सो निज भेद काहू न हेरा॥

नोट—इसी निरंजन को निराकार, नारायण, अथवा मन आदि नामों से जाना जाता है जिसे संसारिक लोग राम, ब्रह्मा, आदि निरंजन, कादर, क्रीम, प्रमेश्वर, प्रमात्मा, हरी, हरि, अद्वैत, भगवान, तथा अलख निरंजन आदि नामों से याद करते हैं। इसी काल निरंजन के ग्रंथ पोथियों में हजारों नाम लिखे गए हैं।

वेद हमारा भेद है, हम वेदन के माहिं । जौन भेद में मैं बसौ, वेदौ जानत नाहिं ॥

कुरान शरीफ कह रहा है 'बेचूना खुदा'। बेचूना अर्थात् निराकार। ईसा मसीह भी कह रहे हैं मेरा आकाशी पिता (स्वर्गीय पिता) मैं उसका इकलौता पुत्र हूँ। अकाशी पिता अर्थात् निराकार। वेद भी निराकार की बात कह रहा है। **जेजे दृश्यम् तेते अनित्यम्। जेजे अदृश्यम् तेते नित्यम्।** यानि निराकार। हमारे सभी धार्मिक ग्रन्थ भी निराकार तक की बात कहते हैं। भाईयो जह निराकार सत्ता वाला जिसको लोग रब्ब कहते हैं, वह 84 लाख योनियों का रचनहार है परन्तु योनियों को चेतन करने वाली जो ऊर्जा है सुरति है वो कोई और चीज है तभी तो इस सिरजनहार निराकार को कबीर साहिब जी बोल रहे हैं।

मन ही निराकार, निरंजन जानिए ॥

—साहिब कबीर जी

मुक्ति से सबका तात्पर्य निराकार की प्राप्ति। साहिब बन्दगी पंथ किसी की निन्दा नहीं करता। निराकार सत्ता को भी स्वीकार करता है, लेकिन आगे की बात का संकेत भी देता है। संत सम्राट् कबीर साहिब जी ने न्यारा कहा और निराकार सत्ता से आगे कहा। सगुण भक्ति, निर्गुण भक्ति अथवा पाँच मुद्राओं से आगे कहा।

इसके आगे भेद हमारा। जानेगा कोई जाननहारा ॥

कहे कबीर जानेगा सोई। जा पर दया सतगुरु की होई ॥

संतों ने आ कर तीन लोक से आगे परम निर्माण, अमर धाम, सत्य लोक अथवा दसवें द्वार से आगे 11वें द्वार का भेद संसार को दिया।

भाईयों साहिब बन्दगी पंथ के बानी सद्गुरु मधुपरमहंस जी काल पुरुष के काया नाम और अमर लोक के विदेह नाम का अंतर समझा कर संसार को सत्य भक्ति की ओर ले जा रहे हैं। आप कहते हैं बढई वश नहीं कहता—

**“जो वस्तु मेरे पास है वह ब्रह्माण्ड में
कहीं नहीं है।”**

काग पलट हंसा कर दीना। ऐसा पुरुष नाम मैं दीना।

अकह नाम, लिखा न जाई, पढ़ा न जाई।

बिन सतगुरु कोई नाहि पाई ॥

मोको कहाँ ढूँढ़े बंदे

कस्तूरी कुण्डल बसे, मृग खोजे बन माहिं ।

ऐसे घट घट साईया, मूरख जानत नाहिं ॥

मृगा की नाभि में कस्तूरी है। पर अज्ञानवश वो उसे जंगल में खोजता फिरता है। वो एक-एक बूटी को सूँघता फिरता है। वो सोचता है कि यह महक कहीं बाहर से आ रही है। ऐसे ही अपने अंदर से आने वाली उस महक को बाहर खोजते-खोजते उसका सारा जीवन समाप्त हो जाता है, पर उसे भेद मालूम नहीं हो पाता कि यह महक तो उसके भीतर से आ रही है। ऐसे ही जीव परमात्मा को कहीं दूर समझकर बाहर ढूँढ़ रहा है। साहिब आगे कह रहे हैं—

लाखों नर तलाश में, घर मिला न अविनाशी का ॥

कुछ-2 परमात्मा को बाहर ढूँढ़ते हुए भटक रहे हैं। पर ऐसा भी नहीं है कि दुनिया केवल बाहर भटक रही है। वास्तव में यह दुनिया अंदर भी परमात्मा की खोज में बहुत भटक रही है। अंदर में कोई बंकनाल में भटक रहा है, कोई भँवर गुफा में भटक रहा है, कोई उनमुनि, खेचरी, भूचरी आदि मुद्राएँ करके भटक रहा है।

कोई प्रार्थना करता है तो शून्य की तरफ निगाह करके कहता है कि हे प्रभु! मेरी आवाज़ सुनो। साहिब ने बड़ा प्यारा कहा—

मोको कहाँ ढूँढ़े ओ बंदे, मैं तो तेरे पास में।

कहा कि मैं तो तेरे पास में रहता हूँ।

ना मैं जल में, ना मैं थल में, नहीं शून्य आकाश में ॥

मैं पानी में भी नहीं रहता हूँ, धरती में भी नहीं और शून्य में भी नहीं रहता हूँ।

ना तीरथ में ना मूरत में, ना एकान्त निवास में।

किसी तीर्थ स्थान में भी नहीं हूँ, मूर्ति में भी नहीं हूँ। कुछ जंगल में चले जाते हैं। पर कह रहे हैं कि मैं एकान्त में भी नहीं हूँ।

ना मंदिर ना मस्जिद में, ना काशी कैलाश में ॥

किसी मंदिर-मस्जिद में भी नहीं रहता हूँ। यानी किसी धर्मस्थान में भी नहीं हूँ। कुछ पहाड़ों में जाकर ढूँढ़ते हैं। पर वहाँ भी नहीं हूँ।

ना मैं जप में ना मैं तप में, ना मैं बरत उपास में।

कुछ मंत्र जाप करते हैं। कह रहे हैं कि मैं जाप में भी नहीं हूँ। कुछ तपस्या करते हैं। पर वहाँ भी नहीं हूँ। व्रत, उपवास आदि में भी नहीं हूँ।

ग़रीब लोग, जिन्हें कई बार कुछ खाने को नहीं मिलता है, उनका तो वैसे ही उपवास हो जाता है। फिर उन्हें मिल जाना चाहिए।

ना मैं क्रिया कर्म में रहता, नहीं योग सन्यास में ॥

कह रहे हैं कि किसी क्रिया में भी नहीं हूँ। योग, सन्यास आदि में भी नहीं हूँ।

कुछ सुबह उठकर क्रियाएँ करते हैं, स्नानादि करते हैं। सुबह उठकर नहाना खराब बात नहीं है, पर यदि सोचें कि इससे परमात्मा मिल जायेगा तो ऐसा नहीं होगा। क्योंकि—

मीन सदा जल में रहे।

मैं किसी की यहाँ आलोचना नहीं कर रहा हूँ। पर मेरा लक्ष्य यह बताना है कि परमात्मा आपके अंदर है। बस, केवल पूर्ण सद्गुरु रूपी भेदी की ज़रूरत है।

कहैं कबीर भेदी लिया, पल में देत लखात ॥

तो कुछ हठयोग करते हैं। ये औघट सिद्धांत हैं। कठिन तपस्या से, शरीर को कष्ट देने से परमात्मा मिलता तो बीमारों को पहले मिलना

चाहिए। तो आगे कह रहे हैं—

नहीं प्राण में नहीं पिंड में, न ब्रह्माण्ड अकाश में।

प्राणों में भी नहीं हूँ, शरीर में भी नहीं हूँ और आकाश में भी नहीं हूँ।

ना मैं भृकुटि भँवर गुफा में, नहीं नाभि के पास में॥

कुछ भृकुटि में ध्यान करते हैं। कह रहे हैं कि वहाँ भी नहीं हूँ। कुछ भँवर गुफा में जाकर धुनें सुनते हैं और कहते हैं कि यही है परमात्मा। पर साहिब कह रहे हैं कि मैं वहाँ भी नहीं हूँ।

तो फिर कहाँ हूँ? आगे कह रहे हैं—

**खोजी होय तुरत मिल जाऊँ, एक पल की तलाश में।
कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, सब स्वाँसों की स्वाँस में॥**

कह रहे हैं कि यदि सच्चे खोजी बनकर खोज करो तो एक पल की तलाश में मिल सकता हूँ। मैं तो हर स्वाँस में समाया हुआ हूँ। यानी स्वाँसों में ही आत्मा का वास है और आत्मा में ही उसका वास है।

अब सवाल उठा कि यदि वो पास में है तो उसकी अनुभूति में देर क्यों है? साहिब के गूढ़ शब्द इस बात की ओर इंगित कर रहे हैं—

परम प्रभु अपने ही उर पायो॥

कह रहे हैं कि उस परमात्मा को अपने हृदय में ही पा लिया। पर जिन्हें यह भेद मालूम नहीं होता, वो तो बाहर ही भटकते रहते हैं।

जैसे नारि कण्ठ मणि भूषण, जान्यो कहूँ गँवायो।

जैसे एक स्त्री के गले में ही माला पड़ी थी। पर वो उसके वस्त्रों में छिप गयी थी। उसने सोचा कि कहीं खो गयी है। वो परेशान थी।

ऐसे ही जीव भी परेशान हो रहा है। वो परमात्मा तो पास में ही है।

केहि सखी ने आन बतायो, मन को भ्रम मिटायो॥

ऐसे में किसी सखी ने उसे आकर बताया और उसके मन का भ्रम

मिट गया।

ज्यों तिरिया सपने सुत खोयो, सपने में अकुलायो।

जाग परी पलंगा पर पायो, ना कहूँ गयो ना आयो॥

जैसे एक स्त्री ने सपने में देखा कि उसका बेटा गुम हो गया है। वो परेशान हो गयी। पर जैसे ही नींद खुली तो देखा कि बेटा तो पास में ही सोया था।

इस तरह परमात्मा कहीं ढूँढ़ने नहीं जाना है। अज्ञान के कारण हम प्रभु को कहीं दूर अनुभव कर रहे हैं। बस, यही मुद्दा है। संतों ने कहा कि प्रभु तुम्हारे अंदर में निवास कर रहा है।

मृगा नाभि बसे कस्तूरी, बन बन खोजत धायो।

मृगा की नाभि में कस्तूरी होती है, पर वो जंगल के कोने-2 में उसे खोजता फिरता है।

जनमानस को चेतन करने के लिए साहिब ने अपनी वाणी में सहज रूप से यह बात बोली।

उलटि सुगंध नाभि की लीनी, स्थिर होय सकुचायो॥

जब पता चला कि यह तो मेरी ही नाभि से महक आ रही है तो शरम आ गयी।

कहैं कबीर भई है वह गति, ज्यों गूँगे गुड़ खायो।

ताका स्वाद कहै कहु कैसे, मन ही मन सकुचायो॥



शब्द शब्द बहु अंतर, सार शब्द मथि लीजै।

कहे कबीर यहां सार शब्द नहिं धृग जीवन सो लीजै॥

अमर लोक सतगुरु क न्यारा

तीन लोक से भिन्न पसारा। अमर लोक सतगुरु का न्यारा॥

कई जगहों पर साहिब ने तीन लोक से परे एक अमर लोक का वर्णन किया है। देखते हैं, कैसा है वो देश। साहिब कह रहे हैं—

तहाँ नहीं परले की छाया। नहीं तहाँ कछु मोह अरु माया॥

हम सब एक नाशवान् संसार में रह रहे हैं। जितने भी ऋषि-मुनि आए, सबने तीन लोक की बात की, नश्वर संसार की बात की, पर साहिब ने जिस अद्भुत देश की बात कही, वो अमर है, कभी नष्ट नहीं होता। आगे कह रहे हैं—

ज्ञान ध्यान को तहाँ न लेखा। पाप पुण्य तहँवा नहीं देखा॥

हम शुभ कर्म करने को कह रहे हैं। साहिब ने कहा—

पाप पुण्य ये दोनों बेड़ी। इक लोहा इक कंचन केरी॥

ये दोनों बेड़ियाँ हैं। पर उस अमर लोक में इनका बंधन भी नहीं। तो कह रहे हैं—

पवन न पानी पुरुष न नारी, हृद अनहृद तहाँ नाहिं विचारी।

ब्रह्म न जीव न तत्व की छाया, नहीं तहँ दस इन्द्री निरमाया॥

यह बहुत विचारणीय बात है कि वहाँ जीव भी नहीं है। जब आत्मा शरीर को धारण करती है तो उसे जीव कहते हैं। पर वहाँ शरीर नहीं, कर्म-ज्ञान इन्द्रियाँ नहीं। इन सबसे परे है वो देश। जैसे ए.सी. वाले कमरे में चले जाएँ तो गर्मी नहीं लगती, इसी तरह उस देश में जाकर आत्मा सुरक्षित हो जाती है, क्योंकि वहाँ जीवों को कष्ट देने वाला

निरंजन भी नहीं है।

तहाँ नहिं ज्योति निरंजन राई। अक्षर अचिंत तहाँ न जाई ॥
काम क्रोध मद लोभ न कोई। तहाँवा हर्ष शोक न होई ॥

यानी सुख दुख से भी परे है वो देश। काम, क्रोध आदि तो मन की वृत्तियाँ हैं, पर वहाँ मन ही नहीं, इसलिए यह सब नहीं है।

नाद बिंद तहाँ न पानी। नहीं तहाँ सृष्टि चौरासी जानी ॥

धुनें भी नहीं हैं। एक सज्जन की किताब में पढ़ा कि वहाँ धुनें हो रही हैं, बड़ी प्यारी प्यारी। नहीं, वो सत्यलोक नहीं हो सकता। वहाँ धुनें भी नहीं हैं। आगे कह रहे हैं—

पिण्ड ब्रह्माण्ड को तहाँ न लेखा। लोकालोक तहवाँ नहीं देखा ॥
आदि पुरुष तहाँवा अस्थाना। यह चरित्र एको नहीं जाना ॥

कहा, उसे कोई नहीं जानता है। वो अमर लोक ही आत्मा का देश है।

संतो, सो निज देश हमारा।

जहाँ जाय फिर हंस न आवै, भवसागर की धारा ॥

सूर्य चंद्र तहाँ नहीं प्रकाशत, नहिं नभ मण्डल तारा।

उदय न अस्त दिवस न रजनी, बिना ज्योति उजियारा ॥

पाँच तत्व गुण तीन तहाँ नहिं, नहिं तहाँ सृष्टि पसारा।

तहाँ न माया कृत प्रपंच यह, लोग कुटुम परिवारा ॥

क्षुधा तृषा नहिं शीत उष्ण तहाँ, सुख-दुख को संचारा।

आधिन व्याधि उपाधि न कछु तहाँ, पाप पुण्य विस्तारा ॥

ऊँच नीच कुल की मर्यादा, आश्रम वरण विचारा।

धर्म अधर्म तहाँ कछु नाहीं, संयम नियम अचारा ॥

अति अभिराम धाम सर्वोपरि, शोभा अगम अपारा।

कहहिं कबीर सुनो भाई साधो, तीन लोक से न्यारा ॥

विचार तो करो न, साहिब कहीं तीन-लोक से न्यारे देश की बात

कर रहे है।

चाँद और सूर्य का प्रकाश भी नहीं है, तारे भी नहीं हैं, दिन और रात का खेल भी नहीं है। वहाँ पाँच तत्व भी नहीं है। नहीं हैं। कुटुम्ब-परिवार आदि का झमेला भी नहीं है। फिर भूख प्यास, सर्दी-गर्मी, सुख-दुख आदि भी नहीं हैं। सुख क्या है? सुख है-मन की इच्छाओं की पूर्ति। मन ने इच्छा की कि फलानी चीज मिल जाए। अगर नहीं मिली तो दुख, मिल गयी तो सुख। मन ने चाहा, व्यापार में फायदा हो। नहीं हुआ तो दुख, हो गया तो सुख। बस, और कुछ नहीं है सुख। इसका संबंध ही मन की इच्छा से है। इस तरह वहाँ कष्ट और बीमारियाँ नहीं हैं। यह सब तो शरीर से संबंधित है। वहाँ शरीर ही नहीं तो बीमारियाँ कैसी। फिर ऊँच-नीच, आश्रम, वरण आदि का झमेला भी नहीं है। धर्म-अधर्म भी नहीं। वो धाम सबसे सुंदर है, उसकी शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता है। वो इस नीरस लोक से बहुत प्यारा है।

यह कोई कोरी कल्पना नहीं। इसमें सच्चाई है, सत्यता है। जैसे विज्ञान नयी नयी चीजें दे रहा है, आगे आगे बोल रहा है, हम मान रहे हैं। विज्ञान तो कह रहा है कि ऐसे कई और सूर्य हैं और उनके परिवार भी हैं। आगे हम सबको मानना पड़ेगा। कुछ समझ रहे हैं, कुछ नहीं। बाद में नहीं वाले भी समझ जायेंगे, मानेंगे। बच्चों को भी पढ़ाया जायेगा। इस तरह साहिब ने जो बातें कहीं, उन्हें भी मानने वाले हुए। अब अधिक मान रहे हैं। कुछ नहीं भी मान रहे हैं। आगे सब मानेंगे। घर घर में माता पिता अपने बच्चों को साहिब की कथा सुनायेंगे, साहिब की वाणियों का ज्ञान देंगे। वो समय कैसा होगा, जब नन्हें नन्हें बच्चे भी साहिब की ये वाणियाँ गुनगुनायेंगे-

मरहमी होय सो जाने संतो, ऐसा देश हमारा है।

अवधू बेगम देश हमारा है॥

वेद कितेब पार नहीं पावत, कहन सुनन से न्यारा है॥

बिन बादल जहाँ बिजुरी चमके, बिन सूरज उजियारा है।
 बिना सीप जहाँ मोती उपजे, बिन मुख बैन उच्चार है ॥
 ज्योति लगाए ब्रह्म जहाँ दरपो, आगे अगम अपारा है।
 कहैं कबीर तहाँ रहनि हमारी, बूझै गुरुमुख प्यारा है ॥

ये शब्द तीन-लोक की व्यवस्था को नकार रहे हैं, कहीं आगे की खबर दे रहे हैं।

वास्तव में उस अमर लोक का वर्णन करना संभव नहीं। वो अमर लोक खुद ही सत्य पुरुष है, उसका क्या वर्णन करूँ।
 साहिब कह रहे हैं—

चल हंसा सतलोक, छोड़ो यह संसारा हो ॥

यहाँ कुछ भी स्थिर नहीं है। पूरे ब्रह्माण्ड को खत्म होने में 30 सैकेंड लगते हैं। कभी यहाँ तूफान आ जाता है, कभी तरह-तरह के क्लेश पड़ जाते हैं, पर वहाँ ऐसा कुछ नहीं है।

तहाँ नहीं यम का क्लेशा ॥

तत्व ही एक दूसरे को खुद मिटा देंगे। वो एक दूसरे के बैरी हैं। आपके घर में ही यदि आपका भाई आपको मारना चाहता है तो आप सुरक्षित नहीं हैं। इस तरह यह दुनिया सुरक्षित नहीं है; यहाँ रहने वाला कोई भी सुरक्षित नहीं है। थोड़ी गर्मी बढ़ जाती है तो मुश्किल हो जाती है, थोड़ी सर्दी बढ़ जाती है तो परेशानी हो जाती है। पर वहाँ ऐसा कुछ नहीं है।

रचना बाहर वो अस्थाना ॥

कुछ सोचते हैं कि परमपुरुष कैसा होगा! आप सभी परम-पुरुष को जानते हैं। वहाँ पहुँचने पर यूँ लगता है कि यह तो मेरा ही घर है, अरे, मैं कहाँ चला गया था! जैसे स्वप्न में घूम-फिर कर आते हैं तो अपने ही घर में होते हैं। ऐसे ही आत्मा मन के कारण भ्रमित है। वो अपनी जगह है। कुछ सोचते हैं कि सत्यलोक में पता नहीं, कैसा लगेगा! जैसे

आवे न जावे मरे न जन्मे सोई सत्यपुरुष हमारा है

सत्यलोक के नज़दीक पहुँचते हैं तो चेतना आ जाती है कि यह तो मेरा ही घर है। जैसे स्वप्न से जाग्रत में आते हैं तो लगता है कि यह तो मेरा ही घर है। तो कह रहे हैं—

ब्रह्मा विष्णु महेश न तहँवा ॥

वो एक निराला देश है। वो आपका अपना देश है।

कहूँ रेक्ता दूर देश का, जोत और नूर का काम नहीं।
शेष कर्ता तो पार पावे नहीं, दस अवतार कूँ गम नहीं।
वेद कहते दोनों से भेद न्यारा रह्या, तहाँ तो अकेला सांही।
साँच झूठ के पड़ गया अन्तरा, साँच तो झूठ का है काम नहीं।
कहै कबीर ओ पुरुष तो अगम है, पहुँचे कोई संतवा देश ताई ॥

कह रहे हैं कि जिस दूर देश की मैं बात कह रहा हूँ, वहाँ ज्योति और प्रकाश का काम नहीं है। वहाँ तो शेषनाग, सृष्टि कर्ता, दस अवतार आदि की भी पहुँच नहीं है। वेद तो सगुण और निर्गुण दोनों की बात कह रहा है, पर वहाँ का भेद न्यारा ही है। वहाँ तो एक ही परमात्मा (साहिब) है। सत्य और झूठ में बड़ा अन्तर है। इसलिए वहाँ झूठे संसार का काम नहीं है। उस अगम देश में उस अगम-पुरुष के पास तो कोई संत ही पहुँच सकता है।

वेद निरंजन के बनाए हुए हैं। फिर उसमें ऋषि-मुनियों ने अपने-अपने विचार भी मिला दिये हैं। वास्तव में वेद स्वसंवेद से निकले हैं। निरंजन ने उसमें से कुछ अंश लेकर उसमें अपनी महिमा कह दी, ताकि दुनिया उसी को माने। इसलिए उसमें परम-पुरुष का भेद नहीं है।

स्वसंवेद है सबकी आदी। ताते सकल मता मरजादी ॥
वेद अरु वाणी जेते जगमहँ। स्वसंवेद है सकल पितामह ॥
ताते चार वेद प्रकटाने। आदि पिता की खबर न जाने ॥
स्वसंवेद ते वेद बनाये। तामें ऋषि मुनि मता मिलाये ॥

कह रहे हैं कि वेद और वाणी जितनी भी संसार में है, उन सबकी

आदि स्वसंवेद है। उसी से चार वेद प्रकट हुए हैं। वेद अपने पिता की खबर नहीं जानते हैं। स्वसंवेद से ही उस निरंजन ने चार वेद बनाए और उनमें सब ऋषि, मुनियों ने अपने-अपने मत मिला दिये।

इसलिए स्वसंवेद की वाणी का शुद्ध रूप लुप्त हो गया। उसमें निरंजन ने अपने वाली बात कह दी। भ्रमित करने के लिए उसने सारा अंश नहीं लिया और फिर उसमें अपनी महिमा कह दी।

तो साहिब कह रहे हैं—

अलख अगोचर जो प्रभु अहई। तासु कथा कैसे कोई कहई ॥
हरि हर ब्रह्मा पार न पावै। और जीव की कौन चलावै ॥
कर्त्ता पुरुष जक्त को जोई। ताको नाम न जाने कोई ॥
जेते नाम जक्त ते माहीं। राय निरंजन को सब आहीं ॥

कह रहे हैं कि जो अलख अगोचर परमात्मा है, उसकी कथा कोई कैसे कह सकता है! ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी उसका पार नहीं पा सकते हैं, फिर अन्य जीवों की बात क्या की जाए! जो सच्चा कर्त्ता है, जिसका यह सब पसारा है, उसका नाम कोई नहीं जानता है। संसार में जितने भी नाम हैं, वो सब निरंजन के हैं।

उस लोक का वर्णन करते हुए साहिब कह रहे हैं—

सुनो धर्मदास भेद की वाणी। तहाँ न रूप रेख निशानी ॥
वहाँ नहीं आदि शक्ति अवतारा। सत्यलोक है सब से न्यारा ॥
वहाँ नहिं आदि निरंजन देवा। ब्रह्मा विष्णु महेश न सेवा ॥
वहाँ नहीं चन्द सूर अवतारा। अगम पुरुष सबहिते न्यारा ॥
पाँच तीन तहाँ नहिं भाई। ताकी गम नहिं काहू पाई ॥
ओहं सोहं और रंकारा। न अरु प्राण अगम ते न्यारा ॥
कोई न आया कोई न जाई। यह खबर कोई नहिं पाई ॥

कह रहे हैं कि वहाँ न कोई रूप है, न रेखा। वहाँ न आद्य-शक्ति है, न अवतार। वो सबसे न्यारा है। वहाँ निरंजन देवता भी नहीं है। वहाँ

आवे न जावे मरे न जन्मे सोई सत्यपुरुष हमारा है

ब्रह्मा, विष्णु और शिवजी भी नहीं हैं। वहाँ चाँद, सूर्य आदि भी नहीं हैं। वो परम-पुरुष इन सबसे न्यारा है। वहाँ पाँच तत्व और तीन गुण भी नहीं हैं। उसका भेद किसी को नहीं हुआ। वहाँ ओहं, सोहं, रंकार आदि भी नहीं हैं। वो इन सबसे बहुत न्यारा है। उसकी खबर किसी को नहीं है। यह देश काल पुरुष का संसार है। यह परम पुरुष का संसार नहीं है। यदि यह सच्चे परमात्मा का देश होता तो साहिब की वाणियाँ यह क्योंकर कहतीं!

चल हंसा सतलोक हमारे, छोड़ो यह संसारा हो।
यहि संसार काल है राजा, कर्म का जाल पसारा हो॥
चौदह खंड बसे वाके मुख में, सबही को करत अहारा हो।
जारबार कोयला कर डारन, फिर फिर दे अवतारा हो॥
ब्रह्मा विष्णु शिवतन धरिया, और को कौन विचारा हो।
सुर नर मुनि सब छलछल मारले, चौरासी में डारा हो॥
मध्य अकाश आप जहाँ बैठे, ज्योति शब्द ठहियारा हो।
ताको रूप कहाँ लग बरनो, अनंत भानु उजियारा हो॥
श्वेत स्वरूप शब्द जहाँ फूले, हंसा करत बिहारा हो।
कोटिन चाँद सूर्य छिपि जैहैं, एक रोम उजियारा हो॥
वही पार इक नगर बसत है, बरसत अमृत धारा हो।
कहैं कबीर सुनो धर्मदासा, लखो पुरुष दरबारा हो॥

कह रहे हैं कि हे हंसा! इस संसार को छोड़ो और हमारे सत्यलोक में चलो। यह संसार तो काल-पुरुष का देश है, जहाँ कर्म का जाल फैला हुआ है। यह काल-पुरुष सबको मार-मारकर बुरा हाल कर रहा है। त्रिदेव आदि भी यहाँ शरीर धारण कर रहे हैं। वो सुर, नर, मुनि आदि सबको धोखा दे रहा है और चौरासी में डाल रहा है। वो स्वयं तो आकाश में ज्योति-स्वरूप होकर बैठा हुआ है। वहाँ करोड़ों सूर्यों का प्रकाश है। पर उससे परे एक देश है। वहाँ अमृत-धारा बह रही है। वहाँ करोड़ों चाँद

और सूर्य एक रोम के प्रकाश से लजा जाते हैं। हे धर्मदास! परम-पुरुष के उस दरबार को देखो।

काल-पुरुष का यह तीन लोक पाँच तत्वों से बना है। पाँचों तत्वों की एक सीमा है। शास्त्रों का भी मानना है कि महाप्रलय में ये पाँचों तत्व नष्ट हो जायेंगे। दयानन्द सरस्वती जी के सत्यार्थ प्रकाश में भी इसका उल्लेख मिलता है और वैज्ञानिक लोग भी इस सच्चाई को समझ रहे हैं।

क्या यह तीन लोक, जिसमें स्वर्ग लोक, पितर लोक, ब्रह्म लोक आदि आते हैं, नष्ट हो जायेगा? हाँ, यह सब समाप्त हो जायेगा, इसलिए यह विश्वास के योग्य नहीं है। संत-महापुरुषों ने तभी तो संसार को झूठा, अनित्य, स्वप्नवत् आदि कहा है। इसमें कुछ भी सच नहीं है, क्योंकि सब नाशवान् है। इस अनन्त को संतों ने तीन भागों में बाँटा है— शून्य, महाशून्य और अमर लोक। शून्य और महाशून्य दोनों नाशवान् हैं, पर शून्य वो स्थान है, जहाँ पर ग्रह, उपग्रह आदि हैं, जबकि महाशून्य में निर्गुण सृष्टि है। वहाँ आर्टिकल्स नहीं हैं। यानी जहाँ तक सूर्य, चाँद, तारे, ग्रह, उपग्रह आदि हैं, वो शून्य स्थान कहलाता है। शून्य की सीमा यहाँ तक है। इसके ऊपर फिर महाशून्य है। महाशून्य में ये सब नहीं हैं। निर्गुण स्थान है। महाशून्य में सात आकाश हैं। इन सात आकाशों को संतों ने सात सुरति कहा है। ये आकाश बड़े विराट् हैं। इनके अन्दर बड़े चुंबकीय आकर्षण हैं। इनमें एक अलोकिक आनन्द है। ये इतने विराट् हैं कि शून्य जैसी करोड़ों सृष्टियाँ एक-एक में समाती जायेंगी।

सर्वप्रथम शून्य से पाँच असंख्य योजन ऊपर जाने पर अचिंत लोक आता है। अचिंत लोक से फिर तीन असंख्य योजन ऊपर जाने पर सोहंग लोक आता है।

शून्य के आगे महाशून्य आ जाता है। महा खला है, जहाँ सात सृष्टियाँ हैं। अचिंत, सोहं, अंकुर आदि सात सृष्टियाँ हैं।

आवे न जावे मरे न जन्मे सोई सत्यपुरुष हमारा है

सोहंग पुरुष के आगे जाना। मूल नाम तहां पुरुष बखाना॥
पांच असंख योजन प्रमाना। तहवां मूल नाम बंधाना॥
मूलपुर्ष ते आगे जाना। अंकुर नाम तहाँ पुर्ष बखाना॥
तीन असंख आगे है भाई। अंकुर नाम तहँ पुरुष रहाई॥

इस तरह 4-4 असंख्य योजन दूरी पर, जिसकी कल्पना भी नहीं की जा सकती है, ये सृष्टियाँ हैं।

अंकुर लोक ते आगे जाना। इक्ष नाम तहाँ पुर्ष बखाना॥
चार असंख योजन प्रमानी। इक्षया पुर्ष तहाँ रजधानी॥
इक्षया आगे लोक बखानो। सो तो अंश पुर्ष को जानो॥
नौ नील एक संख बखाना। बानी नाम पुर्ष स्थाना॥
पुर्ष प्रथम वाणी उच्चार। ताते नाम सर्व आकारा।
बानी नाम ते आगे जाना। सहज नाम तहाँ पुर्ष बखाना॥

सातवाँ और अंतिम सहज लोक है। ये इतने विशाल-विशाल पिण्ड हैं, जिनके आगे ऐसी करोड़ों सृष्टियाँ समा जायेंगी। इनमें कोई भी कमाई से नहीं जा सकेगा। इस पर कह रहे हैं—

महाशून्य विषमी घाटी। बिन सतगुरु पावे नहीं बाटी॥

वहाँ रास्ता बिना सद्गुरु के नहीं मिलने वाला है।

एक आदमी सत्यलोक का हाल बता रहा था, कह रहा था कि वहाँ डाइनें हैं, साँप हैं, मुझे काटने को दौड़े। मैं डर गया। उसने कहीं वाणी में यह पड़ा होगा। साहिब ने यह अलंकार से कहा है। कोई डाइनें नहीं हैं वहाँ, कोई साँप नहीं हैं। वहाँ ऐसा भय नहीं है। मानो भयंकर अजगर हों, वहाँ आकर्षण है। और यह सब सत्यलोक का नहीं, महाशून्य का हाल है यानी वो गप्प मार रहा था।

बिन देखे उस देश की, बात करे सो कूर।

आप तो खारही खात हैं, बेचत फिरे कपूर॥

तो आगे कह रहे हैं—

सहज अंश लग जेतिक भाषा। सो रचना परलय तर राखा॥

यहाँ तक भी कोई सुरक्षित नहीं है।

सहज पुरुष के आगे जाई। आदि पुरुष का लोक है भाई॥

सहज ते एक असंख प्रवाना। तहवां आदि पुर्ष निरवाना॥

तहंवा नहीं परलय की छाया। नहीं तहाँ कछु मोह और माया॥

सहज लोक के आगे परम-पुरुष का लोक हैं। वहाँ प्रलय नहीं है।

तभी तो साहिब ने ऐसे लोक की बात कही है, जो अमर है, सत्य है, तीन लोक से परे है, सप्त आकाश से भी परे है। वहाँ कभी प्रलय नहीं है। यदि आत्मा अमर है तो निश्चय ही वो अमर देश ही आत्मा का सही ठिकाना है।

चल हंसा तू देश हमारे, साहिब देत पुकारा है।

सत्य तो केवल अमर लोक है, झूठा सब संसारा है॥

साहिब पुकार-पुकार कर कह गये हैं कि हे बंदे, इस झूठी दुनिया से ऊपर उठ और अपने देश चल। यह देश आत्मा का नहीं है। साहिब की वाणी बार-बार चेता रही है।

चलना तो है दूर मुसाफिर काहे सोवे रे॥

यह आत्मा बड़ी दूर से आई है। यह देश इसका नहीं है। यह संसार काल-पुरुष का देश है। यहाँ पर कुछ भी आत्मा के हित में नहीं है। वो सबको यहाँ पर दुख दे रहा है। लोग अवतारों की महिमा गाते हैं, पर साहिब कह रहे हैं कि वो भी उसी की सीमा में हैं। तीन-लोक में जो भी है, सब काल के दायरे में है।

यह हरदो यहाँ काल पुरुष के है हिजारे।

हर सिम्त व हर जाय में यम जाल पसारे॥

यक लोक व यक वेद दो दरिया के किनारे।

सैयाद के काबू में हैं सब जीव बेचारे॥

चलती है यहाँ तेग व तलवार दो धारे ।

चल हंस अचल मोलिदो मावाय हमारे ॥

कह रहे हैं कि यहाँ सब काल का ही है । हर शै में उसका जाल फैला हुआ है । दुनिया के सब लोग उस क्रूर के काबू में हैं । इसलिए हे हंस ! तू हमारे देश में चल । आगे कह रहे हैं—

जब भूल गया आदम को आपही आपा ।

पावन्द हुवा तिफली जवानी व बुढ़ापा ॥

सबपर है लगा मलिक मौत मोह व छापा ।

है आग लगी बेशः जलेगा यह सरापा ॥

जलते हैं धोल उड़ते धुवें धार शरीरे ।

चल हंस अचल मोलिदो मावाय हमारे ॥

कह रहे हैं कि यहाँ सब पर मौत का साया मण्डरा रहा है । काम, क्रोध, लोभ, मोह आदि की आग लगी हुई है, जिसमें सारा संसार जल रहा है । इसलिए इस जलते हुए संसार को छोड़ और हमारे देश में चल ।

अफसोस लिया लूट धरम धरमन धूरत ।

एक इश्क जदः भई है हुस्न है औरत ॥

हर कौन किया भौन है यह मोहिनी मूरत ।

दिल पार हुवा पारः बमह पारए सूरत ॥

बाजार खड़े मार वा बीमार नजारे ।

चल हंस अचल मोलिदो मावाय हमारे ॥

यहाँ पर आत्मा का धर्म लूट लिया गया है, उसका लोप हो गया है । यहाँ पर प्रेम करने के लिए एक सुन्दर स्त्री बनी है । सब उसी पर मोहित हो रहे हैं । यहाँ सबको यह रोग लगा हुआ है । इसलिए हे हंस ! तू इस संसार को छोड़ और हमारे देश में चल ।

कैलास चलेगा व जिन् लोका चलेगा ।

अमरावती अलकावती गोलोक चलेगा ॥

सब स्वर्ग चलेगा व तपोलोक चलेगा ।
 जो हृद् जनो मर्द में सो लोक चलेगा ॥
 वो भी चल जावे जहाँ नौलाख सितारे ।
 चल हंस अचल मोलिदो मावाय हमारे ॥

यहाँ जो कुछ भी दिख रहे हैं, एक दिन नष्ट हो जायेगा । स्वर्ग लोक, तप लोक आदि भी नहीं रहेगा । नौ लाख तारे भी नहीं रहेंगे । इसलिए हे अमर हंस ! तू इस नश्वर संसार को छोड़कर उस अमर-धाम में चल ।

कोई न रहे एक पुरुष लोक रहेगा ।
 आवे जो वहाँ से सो खबर उसकी कहेगा ॥
 सब कौल कर शमः अजिले सोल बहेगा ।
 जिसको वह नजर आवे सो फिर कछु न चहेगा ॥
 निश्चल सो रहे कायक जहाँ अमृतधारे ।
 चल हंस अचल मोलिदो मावाय हमारे ॥

अगर कुछ अमर है, अगर कुछ रहेगा तो वो परम-पुरुष का लोक ही रहेगा और अन्य कुछ भी नहीं रहेगा; सब मिट जायेगा । जो वहाँ से आयेगा, वो उसकी खबर कहेगा । जिसको वो नज़र आ गया, फिर वो कुछ न चाहेगा । इसलिए हे हंस ! तू उसी देश में चल ।

हंसों की हुस्न खूबी कही जाए सो कैसे ।
 यह नातिकः गुम सुम्म बयां कीजिए ऐसे ॥
 एक मूय मुनौविर कह इस नूरका जैसे ।
 छिप जाय करोड़ों महेहुर तलअत तैसे ॥
 सब हंस पुरुष रूप पुरुष उनको दुलारे ।
 चल हंस अचल मोलिदो मावाय हमारे ॥

वहाँ हंसों की सुन्दरता का बखान नहीं किया जा सकता है । करोड़ों सूर्य और चंद्रमा वहाँ के प्रकाश के आगे फीके पड़ जाते हैं ।

परम-पुरुष वहाँ सब हंसों से प्रेम करते हैं। हे हंस! तू भी वहाँ चल।

जहाँ रात न दिन है व नहीं सूरज चंदा।

सोहंग दुरै चँवर करे पुरुष अनन्दा॥

यक मूरत सारे न खुदावन्द न बन्दा।

इस मंजिल नजदीक नहीं काल का फंदा॥

जिस लोक हमेशा को परमहंस पधारे।

चल हंस अचल मोलि दो मावाय हमारे॥

वहाँ न रात है, न दिन है, न सूर्य है, न चाँद, न कोई खुदा, न बन्दा। सब उसी के रूप हैं। जिस लोक में परमहंसों का आना-जाना लगा रहता है, हे हंस! तू भी उस देश में चल।

सतगुरु की शरण लेके चलो बहके उस पार।

वह कादिर मुतलक हुवा जिस जीव का मददगार॥

कर पल में सुबुक दोष उठा उसका गरां बार।

पहुँचावे वतन में न बुतन में होवे औतार॥

आजिज से गुनहगार कतारों को जो तारे।

चल हंस अचल मोलिदो मावाय हमारे॥

हे हंस! सतगुरु की शरण ग्रहण कर, क्योंकि वो ही जीव का सच्चा सहायक है। वो तुझे पल में वहाँ पहुँचा देगा। वो तेरे सब दोषों को मिटाकर तुझे वहाँ ले जायेगा। हे हंस! इस तरह सद्गुरु की शरण लेकर उस देश में चल।

काल-पुरुष ने इस संसार में कुटुंब परिवार आदि के मोह-जाल में जीव को फँसा दिया है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आदि में जीव उलझ गया है। साहिब चेता रहे हैं—

खलक है रैन का सपना। समझ दिल कोई नहीं अपना॥

कहीं है लोभ की धारा। बहा जग जात है सारा॥

घड़ा ज्यों नीर का फूटा। पतर जैसे डार से टूटा॥

ऐसी निर्जान जिंदगानी। अजौं क्यों न चेत अभिमानी॥
 सजन परवार सुतदारा। सभी उस रोज हों न्यारा॥
 निकल जब प्राण जावेंगे। कोई नहिं काम आवेंगे॥
 निरख मत भूल तन गोरा। जगत में जीवना थोरा॥
 सदा जिन जान यह देही। लगाओ सत्यनाम से नेही॥
 कटे यम काल की फाँसी। कहें कबीर अविनाशी॥

कह रहे हैं कि यह संसार तो रात के सपने की तरह हैं। यहाँ पर कोई भी अपना नहीं है। यहाँ पर लोभ की कठिन धारा बह रही है और सारा संसार उसी में बहे जा रहा है। जैसे पानी का घड़ा फूटता है, जैसे डाली से पत्ता टूटता है, ऐसे ही यह जिंदगी एक दिन समाप्त हो जायेगी। इसलिए हे अभिमानी जीव! सावधान हो जा। मित्र, कुटुम्बी, पुत्र, स्त्री आदि कोई भी तेरे काम नहीं आयेगा। ये सब एक दिन छूट जायेंगे। जब तेरे प्राण निकल जायेंगे तो ये सब तेरे काम नहीं आयेंगे। तू गोरे तन को देखकर मत भूल। इस संसार में थोड़ा-सा ही जीवन है। इसलिए तू अहंकार, लोभ और सारी चतुराई को त्यागकर इस संसार की माया से परे रह और सत्यनाम से प्रीत कर, जिससे काल की फाँस कट सके। साहिब बार-बार कह रहे हैं—

हंसा सुधि करो आपन देश॥
 जहाँ से आयो सुधि बिसरायो, चले गयो परदेश॥
 वहि देशवा में जोते न बोवै, मोती फिरै हमेश॥
 वहि देशवा में मरै न बिगड़ै, दुख न पड़त कलेश॥
 चलो हंसा बसो मानसरोवर, मोती चुगो हमेश॥
 कहत कबीर सुनो भाई साधो, अजर अमर वह देश॥

वो विद्वानों की समझ से बाहर है, क्योंकि वो वेद-शास्त्रों की सीमा से भी कहीं ऊपर है। वहाँ बुद्धि और कल्पना की पहुँच भी नहीं है। वहाँ जाकर फिर कभी इस मृत्यु लोक में नहीं लौटना है।



आत्मा परमात्मा स्वप्न रूप है

योगावशिष्ट में आता है कि राम जी ने वशिष्ट मुनि से कहा कि यह संसार दुखों का घर है। वशिष्ट मुनि ने कहा कि हे राम! किस संसार की बात कर रहे हो? यह संसार तो कभी हुआ ही नहीं है। यह तुम्हारे चित्त की फुरना है। तुम अपने चित्त का निरोध करो तो संसार का अस्तित्व ही समाप्त हो जायेगा। यह चित्त का फुरना है। चित्त ने बताया कि यह गाड़ी है, यह टेबल है, तभी पता चला। नहीं तो कुछ भी नहीं है।

कहत कबीर सुनो भाई साधो, जगत बना है मन से ॥

मन का निग्रह करें तो दुनिया समाप्त है। इसका कोई अस्तित्व ही नहीं रह जायेगा। इस पर साहिब ने एक शब्द में कहा—

**चन्द्र सूर्य भास स्वप्न, पंच में प्रपंच स्वप्न,
स्वर्ग औ नर्क बीच बसै सोऊ स्वप्न रूप है।**

चाँद और सूर्य का आभास भी स्वप्न है। जो स्वर्ग और नरक में रहने वाले हैं, वो भी स्वप्न में रह रहे हैं। वास्तव में जिस अवस्था में आप बैठे हैं, वो भी स्वप्न है।

**ओहं औ सोहं स्वप्न पिण्ड और ब्रह्माण्ड स्वप्न,
आत्मा परमात्मा स्वप्न रूप सो अरूप है ॥**

वाह, आत्मा-परमात्मा भी स्वप्न है। क्योंकि जब हंसा में मन समाया तो आत्मा कहा गया। मन के मिश्रण के बाद आत्मा नाम पड़ा, इसलिए यह शुद्ध चेतन सत्ता नहीं, इसलिए स्वप्न कहा। और परमात्मा निरंजन को कहते हैं। वो भी स्वप्न है।

जरा मृत्यु काल स्वप्न, गुरु शिष्य बोध स्वप्न,
अक्षर निःअक्षर आत्मा स्वप्न रूप है।

यह भी इंद्रियों और मन तक पहुँच है। लेकिन सद्गुरु स्वप्न नहीं है, क्योंकि वो तत्त्व सुरति में है। आगे साहिब कह रहे हैं—

कहत कबीर सुन गोरख वचन मम,
स्वप्न से परे सत्य सत्य रूप भूप है।
सोई सत्यनाम सत्यलोक बीच वासा करे,
नहीं कहूँ आवे नहीं जावे सत्यरूप है ॥

वो सत्यनाम ही सत्य है, क्योंकि उसका वास उस अमर-लोक में है, जो कभी नष्ट नहीं होता। वहाँ मन का वजूद नहीं है, वहाँ मन की इच्छा नहीं है, वो मन की सीमा से बाहर है, इसलिए उसे सत्य कहा। साहिब कह रहे हैं—

चल हंसा सतलोक, छोड़ो यह संसारा हो ॥

यहाँ कुछ भी स्थिर नहीं है। पूरे ब्रह्माण्ड को खत्म होने में 30 सैकेंड लगते हैं। कभी यहाँ तूफान आ जाता है, कभी तरह-तरह के क्लेश पड़ जाते हैं, पर वहाँ ऐसा कुछ नहीं है।

तहाँ नहीं यम का क्लेशा ॥

तत्त्व ही एक दूसरे को खुद मिटा देंगे। वो एक दूसरे के बैरी हैं। आपके घर में ही यदि आपका भाई आपको मारना चाहता है तो आप सुरक्षित नहीं हैं। इस तरह यह दुनिया सुरक्षित नहीं है; यहाँ रहने वाला कोई भी सुरक्षित नहीं है। थोड़ी गर्मी बढ़ जाती है तो मुश्किल हो जाती है, थोड़ी सर्दी बढ़ जाती है तो परेशानी हो जाती है। पर वहाँ ऐसा कुछ नहीं है।

रचना बाहर वो अस्थाना ॥

कुछ सोचते हैं कि परमपुरुष कैसा होगा! आप सभी परम-पुरुष को जानते हैं। वहाँ पहुँचने पर यूँ लगता है कि यह तो मेरा ही घर है, अरे, मैं कहाँ चला गया था! जैसे स्वप्न में घूम-फिर कर आते हैं तो अपने ही

घर में होते हैं। ऐसे ही आत्मा मन के कारण भ्रमित है। वो अपनी जगह है। कुछ सोचते हैं कि सतलोक में पता नहीं, कैसा लगेगा! जैसे सतलोक के नज़दीक पहुँचते हैं तो चेतना आ जाती है कि यह तो मेरा ही घर है। जैसे स्वप्न से जाग्रत में आते हैं तो लगता है कि यह तो मेरा ही घर है। तो कह रहे हैं—

ब्रह्मा विष्णु महेश न तहँवा ॥

वो एक निराला देश है। वो आपका अपना देश है।

कहूँ रेक्ता दूर देश का, जोत और नूर का काम नहीं। शेष कर्ता तो पार पावे नहीं, दस अवतार कूँ गम नहीं। वेद कहते दोनों से भेद न्यारा रह्या, तहाँ तो अकेला सांही। साँच झूठ के पड़ गया अन्तरा, साँच तो झूठ का है काम नहीं। कहै कबीर ओ पुरुष तो अगम है, पहुँचे कोई संतवा देश ताई ॥

कह रहे हैं कि जिस दूर देश की मैं बात कह रहा हूँ, वहाँ ज्योति और प्रकाश का काम नहीं है। वहाँ तो शेषनाग, सृष्टि कर्ता, दस अवतार आदि की भी पहुँच नहीं है। वेद तो सगुण और निर्गुण दोनों की बात कह रहा है, पर वहाँ का भेद न्यारा ही है। वहाँ तो एक ही परमात्मा (साहिब) है। सत्य और झूठ में बड़ा अन्तर है। इसलिए वहाँ झूठे संसार का काम नहीं है। उस अगम देश में उस अगम-पुरुष के पास तो कोई संत ही पहुँच सकता है।

वेद निरंजन के बनाए हुए हैं। फिर उसमें ऋषि-मुनियों ने अपने-अपने विचार भी मिला दिये हैं। वास्तव में वेद स्वसंवेद से निकले हैं। निरंजन ने उसमें से कुछ अंश लेकर उसमें अपनी महिमा कह दी, ताकि दुनिया उसी को माने। इसलिए उसमें परम-पुरुष का भेद नहीं है। स्वसंवेद है सबकी आदी। ताते सकल मता मरजादी ॥ वेद अरु वाणी जेते जगमहँ। स्वसंवेद है सकल पितामह ॥ ताते चार वेद प्रकटाने। आदि पिता की खबर न जाने ॥ स्वसंवेद ते वेद बनाये। तामें ऋषि मुनि मता मिलाये ॥

कह रहे हैं कि वेद और वाणी जितनी भी संसार में है, उन सबकी आदि स्वसंवेद है। उसी से चार वेद प्रकट हुए हैं। वेद अपने पिता की खबर नहीं जानते हैं। स्वसंवेद से ही उस निरंजन ने चार वेद बनाए और उनमें सब ऋषि, मुनियों ने अपने-अपने मत मिला दिये।

इसलिए स्वसंवेद की वाणी का शुद्ध रूप लुप्त हो गया। उसमें निरंजन ने अपने वाली बात कह दी। भ्रमित करने के लिए उसने सारा अंश नहीं लिया और फिर उसमें अपनी महिमा कह दी।

तो साहिब कह रहे हैं—

अलख अगोचर जो प्रभु अहई। तासु कथा कैसे कोई कहई ॥
हरि हर ब्रह्मा पार न पावै। और जीव की कौन चलावै ॥
कर्त्ता पुरुष जक्त को जोई। ताको नाम न जाने कोई ॥
जेते नाम जक्त ते माहीं। राय निरंजन को सब आहीं ॥

कह रहे हैं कि जो अलख अगोचर परमात्मा है, उसकी कथा कोई कैसे कह सकता है! ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी उसका पार नहीं पा सकते हैं, फिर अन्य जीवों की बात क्या की जाए! जो सच्चा कर्त्ता है, जिसका यह सब पसारा है, उसका नाम कोई नहीं जानता है। संसार में जितने भी नाम हैं, वो सब निरंजन के हैं।



एक पुरुष है सबसे न्यारा।
सब घट व्यापक अगम अपारा ॥
ताकी भक्ति महा निरतारा।
भक्ति करे सो उतरे पारा।

कहन सुनन से न्यारा है

जो पहुँचा जानेगा वोही, कहन सुनन से न्यारा है ॥

बाकी किसी का भी वर्णन हो सकता है, पर उस अमर लोक का वर्णन नहीं हो सकता है। वो कहने में नहीं आता है। वो इस रचना से बाहर की बात है।

रचना बाहर वो अस्थाना ॥

धर्मदास जी यह सुन आश्चर्यचकित हुए, कहा कि कुछ तो बताओ कि कैसा है !

आदि पुरुष के रूप को, कहो मोहि समझाई के ॥

साहिब ने कहा कि पिण्डे के उदाहरण से समझाता हूँ।

प्रथम पुरुष का रूप बखानो। सो तुम रूप हृदय में आनो ॥

पुरुष अंग छवि वर्ण सुनाई। गुप्त भेद मैं तोहि लखाई ॥

पुरुष शोभा अगम अपारा। ताको मैं अब बरणो पारा ॥

कोटि अनन्त योजन लौ काया। कहाँ लग कहों तासु की छाया ॥

कह रहे हैं—अनन्त कोटि योजन तक उसकी काया है। अनन्त कोटि योजन। कोई हजार, लाख, करोड़, अरब, खरब, पद्म, नील, संख्य, असंख्य भी नहीं, अनन्त कोटि योजन। संख्य के बाद 10 संख्य आता है, फिर आता है असंख्य। असंख्य यानी जिसकी गणना नहीं की जा सकती है। फिर अनन्त की तो बात ही नहीं की जा सकती है। पर साहिब कह रहे हैं कि एक अनन्त नहीं, कोटि अनन्त। और कोटि अनन्त भी नहीं, कोटि अनन्त योजन की बात कर रहे हैं। इतनी विशाल काया।

वास्तव में उसकी कोई काया नहीं है, पर पिण्डे के उदाहरण से समझा रहे हैं। कह रहे हैं—

कछु संक्षेप में देऊँ बताई। कहाँ कहीं कछु वर्णि न जाई ॥
कोटि अल्प युग जाय सिराई। मुख अनन्त सो वर्णि न जाई ॥

कह रहे हैं कि संक्षेप में बताता हूँ, पर वास्तव में अनन्त मुख हों और करोड़ों कल्प तक बोलता रहूँ तो भी उसका वर्णन नहीं कर पाऊँगा।

ये कछु सूक्ष्म रूप लखाऊँ। कछु कछु शोभा वर्ण सुनाऊँ ॥
अब मस्तक को वर्णों भेषा। मानों अनन्त भानु शशि लेखा ॥
जगर मगर मस्तक उजियारा। वर्णत बनै न रूप अपारा ॥

मस्तक ऐसा है, मानो अनन्त सूर्य और चन्द्रमा हों। वो कोई मस्तक नहीं। हमारी कल्पना जहाँ तक जा सकती है, उससे भी परे है। वो। केवल समझाने के लिए पिण्डे का उदाहरण दे रहे हैं। कह रहे हैं कि उसकी जगमगता का वर्णन करके भी नहीं किया जा सकता है।

अब नेत्रन का कहों प्रमाना। मानो अनन्त भान शशि जाना ॥
जिमि कोटिन दामिन लपटानी। जोत अनन्त की जिमि खानी ॥
वर्णत बने न ताको रंगा। कहाँ लग कहों तास प्रसंगा ॥

उसके नेत्र भी मानो अनन्त सूर्य और चन्द्रमा हों; मानों करोड़ों बिजलियाँ लिपटी हुई हों। यह सब वर्णन संभव नहीं। संसार की कोई भी उपमा उसके रूप के वर्णन में समर्थ नहीं, इसलिए कहा कि केवल इशारा दे रहा हूँ, क्योंकि तुम्हें समझाने के लिए मेरे पास यही साधन है।

नासा रूप कहों प्रचण्डा। मानो अञ्ज अनन्त ब्रह्माण्डा ॥
पोहप बास तहँ ते प्रकटाई। घ्राण अनन्त योजन लग जाई ॥

नासिका में मानों अनन्त ब्रह्माण्ड हों और वहाँ से निकल रही महक अनन्त योजन तक फैल रही है। ऐसे ही—

श्रवण रूप मैं कहौँ बखानी। अनन्त सिंध मानो समानी ॥

ता मह कमल अनन्तन फूला । साखा पत्र डार नहिं मूला ॥
ताको शोभा वर्णि न जाई । कमल रूप तहाँ अधिक सुहाई ॥

कानों में मानों अनन्त समुद्र समाए हुए हों और उनमें अनन्त कमल बिना शाखा, पत्र, डाल और जड़ के खिले हुए हैं । उनकी शोभा वर्णन से परे है । आगे कह रहे हैं—

अब मुख शोभा कहों बखानी । पिण्ड ब्रह्माण्ड तेहि माहिं समानी ॥
नौ शून्य जहाँ लग बासा । सो मुख भीतर कीन्ह निवासा ॥
लोक अनन्त देखिये ताही । सर्वाकार रूप है जाही ॥

नौ शून्य का जहाँ तक बास है, वो सब उसके मुख में हैं । इतना ही नहीं, अनन्त लोक उसके मुख में दीख रहे हैं । फिर उसका वर्णन कैसे हो !

पुर्ष रूप का वर्णों भाई । वर्णन बने न होय ढिठाई ॥
पुरुष शोभा अगम अपारा । मुख अनन्त नहीं पावे पारा ॥

परम-पुरुष के ऐसे रूप का वर्णन करते नहीं बनता; यह तो केवल ढिठाई ही है । उसकी शोभा तो अथाह है; जिसे अनन्त मुखों से भी नहीं कहा जा सकता है ।

चिकुर शोभा कहों बुझाई । कोटि रवि शशि रोम लजाई ॥
कोटिन चंद सूर प्रकाशा । एक-एक रोम अनन्तन भासा ॥

उसके बालों की शोभा का क्या कहना ! एक रोम करोड़ों सूर्य चन्द्रमा को भी लजा देने वाला है । आगे कह रहे हैं—

पुरुष अंग का करौ बखाना । रचना कोटि तातु में जाना ॥
श्वेत अकार पुरुष को अंगा । फटकवर्ण देही को रंगा ॥
शब्द स्वरूप पुरुष है भाई । वर्णों कहा वर्ण नहिं जाई ॥

करोड़ों रचनाएँ उसकी काया में समायी हुई जानो । उसकी देह श्वेत और पारदर्शी है । वहाँ संसार वाली कोई बात नहीं है । वो साहिब तो शब्द और प्रकाश रूप है । वो निःशब्द शब्द है, केवल उदाहरण देकर

समझा रहे हैं। उसका वर्णन नहीं किया जा सकता है।

जहाँ लग जीव बुन्द है भाई। ताकर भेद कहौं समुझाई ॥
हंस अनन्त बुन्द सम जानो। अमी सिन्धु पुरुष पहिचानो ॥

अनन्त हंसों को बून्दों के समान जानो और उस परम-पुरुष को
अमृत के विशाल समुद्र के समान।

अद्भुत ज्योति पुरुष की काया। हंसन शोभा अधिक सुहाया ॥
एक हंस जस षोडस भाना। अग्र वासना हंस अघाना ॥
सत्यपुरुष की ऐसी बाता। कोटिक शशी इक रोम लजाता ॥
एक रोम की शोभा ऐसी। और बदन की बरनों कैसी ॥
अनगिनत चन्दा जगत में, अनगिनत दरसें सूर ॥
ऐसे झालकें नूर सब, नूर नूर भरपूर ॥
कोटि चन्द की शीतलता, कोटि सूर्य का तेज ॥
ऐसी शोभा लोक की, सत्य पुरुष की सेज ॥

कह रहे हैं कि परम-पुरुष के एक-एक रोम की महिमा इतनी
है कि करोड़ों सूर्य और चंद्रमा लजा जाएँ। फिर पूरे शरीर की महिमा कैसे
वर्णन करूँ!!

शब्द अखण्ड होत दिन राती। न कोई पूजा न कोई पाती ॥

ऐसी हकीकत को मैंने जाना।

अरस कुरस नूर दरस, तेज पुंज देखा।

कोटि भानु साँच मानु, रोम रोम देखा ॥

—गरीबदास जी

गरीबदास जी कह रहे हैं कि मेरी इस बात को सच मानना कि
मैंने उस परम-पुरुष के एक-एक रोम में करोड़ों सूर्यों का प्रकाश देखा।

विनती करैं कर जोर धर्मन, सुनहु सतगुरु सार हो।

सत्तलोक है कौन शोभा, तहाँ कौन व्योहार हो ॥

कौन रूप जो पुरुष रहहीं, कवन सुख हंसा करे।

कामिनी किहि रूप राजै, तहाँ सुख विस्तार हो॥

धर्मदास जी साहिब से पूछ रहे हैं कि सत्यलोक की शोभा कैसी है और वहाँ कैसा व्यवहार होता है ? परम-पुरुष का रूप कैसा है ? हंसों को कैसा सुख है ? मुझे विस्तार से यह सब कहो ।

कहैं कबीर सुनो धर्मदासू । सत्यलोक को कहों प्रकासू ॥
है सत्यलोकहि अम्मर काया । एक रूप सबही त्रय माया ॥
षोडश भान हंस की क्रांती । अमर चीर पहिरे बहु भांती ॥
शोभा पुरुष कही नहिं जाई । कोटिन रवि इक रोम लजाई ॥
अमर लोक अमर है काया । अमर पुरुष जहाँ आप रहाया ॥
अमर पुरुष का पावै भेदा । कहैं कबीर सों हंस अछेदा ॥
सत्तलोक सत शब्द पसारा । सत्य नाम है हंस अधारा ॥
अमृत फल के भोजन करहीं । युगन युगन की क्षुभ्या हरहीं ॥
पीवत सुधा भरम मिट जाई । जन्म जन्म की तृषा बुझाई ॥
अनहित वचन बोल नहिं बानी । प्रेम भाव अमृत रसरानी ॥
शोभा बहुत जहाँ मन भावन । हंस कामिनी रंग बढ़ावन ॥
अमृत नाम हृदय में लावे । प्रेम भाव पुरुषहि मन भावे ॥
आशा बस मन कोऊ नाहीं । भयो प्रकाश शब्द के माहीं ॥
बूझो संत ज्ञानी जो होई । सतगुरु शब्द हृदय समाई ॥
है निहशब्द शब्द सों कहेऊ । ज्ञानी सोई जो वह पद लहेऊ ॥
धर्मदास मैं तोहि सुझावा । सार शब्द का भेद बतावा ॥
सार शब्द का पावै भेदा । कहैं कबीर सो हंस अछेदा ॥
सार शब्द निःअक्षर आहीं । गहै नाम तेहि संशय नाहीं ॥
सार शब्द जो प्राणी पावै । सत्यलोक महिं जाय समावै ॥

साहिब कह रहे हैं कि सत्यलोक में सबको अमर काया है, सब एक रूप हैं । वहाँ एक हंस का प्रकाश 16 सूर्यों का है । परम-पुरुष की बड़ी शोभा है । करोड़ों सूर्य उनके एक रोम से लजा जाएँ, ऐसा प्रकाश

है। अमर-लोक में सबकी अमर काया है, क्योंकि वहाँ परम-पुरुष स्वयं रहता है। जो उस परम-पुरुष का भेद पा लेता है, वो हंस समान होकर निर्मल हो जाता है। सत्य-लोक में पहुँचने के लिए जीव को सत्य नाम का ही सहारा है। वहाँ हंस अमृत फल का भोजन करता है, जिससे युगों की भूख मिट जाती है। अमृत को पीकर सब भ्रम समाप्त हो जाता है और जन्मों की प्यास भी बुझ जाती है। (वहाँ हंस का भोजन वो परम-पुरुष ही है, जिसमें सब हंस रहते हैं। उसी को अमृत कहा है) वहाँ कोई अनहित शब्द नहीं बोलता है। सब प्रेम भाव से अमृत ही टपकाते हैं। अमृत नाम को प्रेम भाव से हृदय में धारण करके ही उसे पाया जा सकता है। ज्ञानी वही है जो सद्गुरु के शब्द को हृदय में धारण करे। वो निःशब्द शब्द को हृदय में धारण करके उस पद को प्राप्त कर लेता है। हे धर्मदास, मैंने तुम्हें सार शब्द का भेद बताया। जो इस भेद को जान जाता है, वो हंस समान होकर निर्मल हो जाता है। जो यह सार नाम पा लेता है, वो निश्चय ही सत्य लोक में जाकर निवास कर लेता है।

इतना कुछ कहने के बाद भी साहिब एक जगह कह रहे हैं—

जो पहुँचा जानेगा वोही, कहन सुनन से न्यारा है ॥

कह रहे हैं कि कहने-सुनने में नहीं आयेगा। यानी संकेत ही दिया है, पर कह नहीं पाया हूँ। इसलिए कह रहे हैं—

धर्मदास समझ के रहना। कहाँ कहा कछू नहीं कहना ॥

कह रहे हैं कि मेरी बात को समझ लेना, कुछ कहा नहीं जा रहा है।



**चल हंसा तू देश हमारे, साहिब देत पुकारा है।
सत्य तो केवल अमर लोक है, झूठा सब संसारा है ॥**

अदाकर खुद खजाने से छुड़ा ले अपने बंदे को

अब सवाल यह है कि ऐसे निराले आत्मा के अंशी परम-पुरुष के पास यह जीवात्मा कैसे वापिस जाकर मिले ?

बिन सतगुरु पावे नहीं, कोई कोटिन करे उपाय।।

अपनी ताकत से जीवात्मा कभी भी निरंजन की फाँस काटकर वहाँ नहीं पहुँच सकती है। निरंजन के बड़े पहरें हैं। सद्गुरु परम-पुरुष में मिला हुआ है। उसमें मिलने से उसकी सुरति में वो मूल तत्व आ जाता है कि आपके अन्दर भी परम-पुरुष को प्रगट कर देता है। यूँ परम-पुरुष किसी को आसानी से अपने में नहीं समाने देते हैं, पर जो परम गुरुमुख होता है, उसे परम-पुरुष यह अवसर प्रदान कर देते हैं और वो उनमें समाकर उन्हीं का रूप हो जाता है। फिर वापिस आकर वो संसार के अन्य जीवों को भी वो तत्व प्रदान करके काल के कष्टों से बचा लेता है। वो जो सार नाम देता है, उसके बिना अन्य किसी भी उपाय से जीव संसार से पार नहीं हो सकता है। ऐसा इसलिए कि निरंजन से ताकतवर अन्य कोई भी नहीं है। यह नाम स्वयं परम-पुरुष ही है। इसलिए इस नाम के अलावा और कोई भी उपाय नहीं है कि जीव अपनी ताकत से या अन्य किसी सांसारिक गुरु द्वारा दिये जाने वाले 52 अक्षर के सांसारिक नाम द्वारा पार हो सके। परम-पुरुष में मिले हुए सद्गुरु द्वारा दिये जाने वाले सत्यनाम से ही यह जीव कठिन काल के कष्टमय संसार से पार हो

सकता है। क्योंकि उस नाम के आगे निरंजन का बस नहीं चलता है। इसलिए साहिब कह रहे हैं—

अदाकर खुद खजाने से, छुड़ा ले अपने बंदे को॥

यानी नाम रूप में वो परम-पुरुष खुद इसे वहाँ ले जाता है।

त्रिकाल में जितने भी ऋषि-मुनि, सिद्ध-साधक, योगी-जपी, तपस्वी, सन्यासी, योगेश्वर आदि आए, कोई भी परम-पुरुष तक नहीं पहुँच सका, क्योंकि किसी के पास सद्गुरु का यह सच्चा नाम नहीं था। वो बड़ी-बड़ी साधनाएँ किये, पर मन का पार नहीं पा सके, परम-पुरुष तक नहीं पहुँच सके। इसलिए साहिब वाणी में साफ-साफ कह रहे हैं—

**गण गंधर्व ऋषि मुनि अरु देवा। सब मिलि लाग निरंजन सेवा॥
सिद्ध साधक और योगी जती। आगे खोज न पाय रत्ती॥
जाय निरंजन माहिं समावें। आगे की कोई गम्य न पावें॥**

आगे का भेद कोई नहीं पाया। सब निरंजन तक ही सीमित रह गये।

अब सद्गुरु की महिमा इसलिए है कि वो परम-पुरुष स्वयं जीव का कल्याण करने में सक्षम नहीं है। वो एक सागर की तरह है, जो स्वयं अपने जल को दूसरों तक पहुँचाने में सक्षम नहीं है। वो तो चंदन के वृक्ष की तरह है जो स्वयं अपनी महक को दूसरों तक नहीं पहुँचा सकता है। अब बादल ही समुद्र के जल को ले जाकर दूर-दूर तक पहुँचाते हैं और सारा वातावरण सुंदर कर देते हैं। चंदन की महक को दूसरों तक पहुँचाने का काम हवा करती है। कुछ ऐसा ही रोल सद्गुरु अदा करते हैं। वो परम-पुरुष में समाकर उनकी वो परम चेतन सुरति को अपने में समेटते हैं और नाम दान के समय उस परम चेतन सुरति से शिष्य की सुरति के अन्दर छिपे परम-पुरुष के तत्व को जाग्रत कर देते हैं। इसी को नाम दान कहते हैं। फिर यही नाम जीते-जी या शरीर के छूटने पर हंस को उसके सही ठिकाने (अमर लोक) ले जाता है।



सोई नाम है अक्षर बासा । काया ते बाहर परकासा ॥

काया नाम सबहिं गुण गावै, विदेह नाम कोई बिरला पावै ॥

विदेह नाम पावेगा सोई, जिसका सद्गुरु साँचा होई ॥

पाँच तीन यह साज पसारा, न्यारा शब्द विदेही हो ।

पाँच कहो तो छटवें हम हैं, आठ कहो नौ आई हो ॥

पाँच तीन अधीन काया, न्यार शब्द विदेह हो ।

सुरति माहिं विदेह दरशै, गुरु मता निज एह हो ॥

छिन इक ध्यान विदेह समाई । ताकी महिमा बरनिन न जाई ॥

सार नाम सद्गुरु से पावे । नाम डोर गहि लोक सिधावे ॥

सार शब्द विदेह स्वरूपा । निःअक्षर वह रूप अनूपा ॥

तत्त्व प्रकृति भाव सब देहा । सार शब्द निःतत्त्व विदेहा ॥

बावन अक्षर में संसारा । निःअक्षर सो लोक पसारा ॥

सोई नाम है अक्षर बासा । काया ते बाहर परकासा ॥

शब्द शब्द सब कोई कहे, वह तो शब्द विदेह ।

जिभ्या पर आवे नहीं, निरख परख के लेह ॥

सुनो हंस गहो पद सांची । ध्यान विदेह में रहि हो रांची ।

इतना कहि सतगुरु बतलाया । सबको विदेह ध्यान समझाया ॥

—साहिब कबीर जी

पिण्ड ब्रह्माण्ड और वेद कितेबै, पाँच तत्त्व के पारा ।

सतलोक यहाँ पुरुष विदेही, वह साहिब करतारा ॥

—दादू दयाल जी

नाम बिदेही जब मिले, अंदर खुलें कपाट ।

दया सन्त सतगुर बिना, को बतलावे बाट ॥

—तुलसी साहिब हाथरस वाले

साखियाँ साहिब की

जगमें चारों राम हैं, तीन राम व्यवहार ।
चौथा राम निज सार है, ताका करो विचार ॥
एक राम दशरथ घर डोलै, एक राम घट-घट में बोलै ।
एक राम का सकल पसारा, एक राम त्रिभुवन तें न्यारा ॥
आकार दशरथ घर डोलै, निराकार घट-घट में बोलै ।
बिन्दु राम का सकल पसारा, निरालम्ब सबही तें न्यारा ॥

साहिब कह रहे हैं कि संसार में चार तरह के राम हैं, पर तीन राम के विषय में ही सारी दुनिया जानती है जबकि चौथा राम (साहिब) ही सार तत्व है। एक तो साकार राम है, जिसे दशरथ पुत्र राम के रूप में सभी जानते हैं। फिर दूसरा निराकार राम भी जगत प्रसिद्ध है, क्योंकि सभी धर्म-शास्त्र उसी निराकार के बारे में कह रहे हैं, जो मन रूप में प्रत्येक घट में रह रहा है। फिर तीसरा राम बिन्दु के रूप में जाना जाता है, जो जगत के सब जीवों की उत्पत्ति का कारण है। इसके बाद इन सबसे परे जो निरालम्ब राम है, वो तीन-लोक से परे सबसे न्यारा है। उसी को सब संतों ने अपना साहिब कहकर पुकारा है। वो तीन-लोक से परे चौथे लोक (अमर-लोक) का स्वामी, सच्चा साहिब है।

अक्षय पुरुष इक पेड़ है, निरंजन बाकी डार ।

त्रिदेवा शाखा भये, पात भया संसार ॥

परमात्मा (साहिब) को एक पेड़ की तरह मान लिया जाए तो निरंजन (निराकार) उसकी एक डाली है और उस डाली पर फिर आगे

आवे न जावे मरे न जन्मे सोई सत्यपुरुष हमारा है

ब्रह्मा, विष्णु और महेश रूपी तीन (सगुण) शाखाएँ हैं। बाकी संसार पत्तों की तरह है अर्थात् त्रिदेव (सगुण) से बड़ा निरंजन (निराकार) है और निराकार से बड़ा साहिब है।

अगुण कहौं तो झूठ है, सगुण कहा न जाइ।

अगुण सगुण के बीच में, कबीरा रहा लुभाई॥

कोई उस परमात्मा को सगुण बता रहा है, कोई निर्गुण; पर कबीर साहिब कह रहे हैं कि उसे निराकार कहना तो बिल्कुल झूठ है जबकि सगुण उसे कहा ही नहीं जा सकता, इसलिए मैं इन दोनों के मध्य, इन दोनों से परे जो सत्ता है, उसमें मग्न हूँ।

बिन पावन की राह है, बिन बस्ती का देस।

बिना पिण्ड का पुरुष है, कहै कबीर संदेश॥

साहिब कह रहे हैं कि परमात्मा की राह बड़ी अनोखी है; वो पाने वाली बात नहीं है अर्थात् वो परमात्मा तो सबके भीतर है, सबके पास है; वो कहीं दूर नहीं है, कहीं खोया नहीं है, जो उसे पाना है; इसलिए वो पाने वाला रास्ता नहीं है। फिर वो अमर-लोक भी बिना बस्ती का है; वहाँ दीवारें बगैरह नहीं हैं; वो अद्भुत है। फिर उस परम-पुरुष (साहिब) की बात भी बड़ी ही अनोखी है। उसका कोई पंच भौतिक शरीर भी नहीं है। साहिब कह रहे हैं कि मैं उसी साहिब का संदेश दे रहा हूँ।

वेद हमारा भेद है, हम वेदन के माहीं।

जोन भेद में हों बसैं, वेदौ जानत नाहीं॥

साहिब कह रहे हैं कि हमारे वेद सब रहस्यों से भरे पड़े हैं; वेदों में बड़ा ज्ञान है और वेदों में ही हमारी कहानी भी निहित है; पर जिस रहस्य में मैं रहता हूँ, उसे वेद भी नहीं जानता है।

भारी कहूँ तो बहु डरूँ, हलका कहूँ तो झूठ।

मैं क्या जानूँ राम को, नैना कभू न दीठ॥

दीठा है तो कस कहूँ, कहूँ तो को पतियाय।

जैसा है तैसा रहो, हरषि हरषि गुनगाय॥

परमात्मा को अगर भारी कहें तो डर लगता है; अगर हल्का कहें तो बिल्कुल झूठ है। इन नश्वर आँखों से उसे कभी नहीं देखा जा सकता, इसलिए बुद्धि उसे जान ही नहीं सकती। अगर उस परमात्मा को कोई अन्दर की आँखों से देख भी ले तो वो कहने में नहीं आता ... कैसे कहें! अगर किसी तरह कहने का प्रयास भी करें तो कोई विश्वास नहीं करता है। इसलिए वो जैसा है, उसे वैसा ही रहने दो और केवल अपने मन में ही प्रसन्न होकर उसके गुणों का गान करो।

जो देखै सो कहे नहीं, कहै सो देखै नाहिं।

सुनै सो समुझावै नहीं, रसना दृग शरवन काहिं॥

जो उस परमात्मा को देख लेता है, वो उसका बखान नहीं कर सकता कि कैसा है। इसलिए वो चुप ही रहता है। दूसरी ओर जिसने उसे देखा ही नहीं होता, वो ही यह बताने का प्रयास करता है कि ऐसा है, वैसा है। कान जो कुछ सुनते हैं, उसे जीभ, आँखें थोड़े ही समझा सकते हैं।

कबीर एक न जानियां, बहु जाने क्या होय।

एकहिते सब होत है, सबते एक न होय॥

साहिब कह रहे हैं कि यदि उस एक साहिब को नहीं जाना तो अन्य सब कुछ भी जान लेने से क्या लाभ! क्योंकि सब मिलकर एक नहीं हो सकते जबकि एक से ही सब बनते हैं।

यह बात ठीक वैसे ही है जैसे चाहे कितनी भी शून्य लगा लो, पर यदि आगे एक न लगा होगा तो सब व्यर्थ हो जाएगा जबकि एक लग जाने से ही सबकी कीमत बनती है।

तेरा साईं तुझी में, ज्यों पुहुपन में बास।

कस्तूरी का मिरग ज्यों, फिर-फिर ढूँढ़े घास ॥

साहिब कह रहे हैं कि हे जीव! जिस तरह फूल में खुशबू रहती है, इसी तरह तेरा साहिब तो तेरे अन्दर ही है अर्थात् आत्मा में ही परमात्मा का वास है। पर जिस तरह मृगा की नाभि में ही कस्तूरी होती है और वो उसे जगह-2 घास में ढूँढ़ता फिरता है, इसी तरह मनुष्य भी उस परमात्मा को बेहद गलत तरीके से बाहर ढूँढ़ रहा है।

मृगा की नाभि में जो कस्तूरी रहती है, उसकी बड़ी महक होती है; पर वो मृगा सोचता है कि यह महक कहीं बाहर से आ रही है, इसलिए वो उसे वन-2 खोजता फिरता है। जीवन-भर वो महक देने वाली उस कस्तूरी को बाहर खोजते-2 प्राण गँवा देता है, पर उसे प्राप्त नहीं कर पाता। इसी तरह मनुष्य भी अज्ञानतावश परमात्मा को बेहद गलत तरीके से बाहर ढूँढ़ रहा है। कुछ स्वार्थियों ने मनुष्य को बाहर भटका दिया है। जीवन-भर तीर्थ, व्रत आदि करते-2 मनुष्य प्राण गँवा देता है, पर अपने अन्दर में बस रहे उस परमात्मा के दर्शन नहीं कर पाता है और फिर चौरासी के चक्कर में फँसकर बार-2 जन्मता और मरता रहता है। तभी तो फिर समझा रहे हैं —

ज्यों नैनन में पूतली, त्यों मालिक घट माहिं ।

मूरख नर जानै नहीं, बाहर ढूँढ़न जाहिं ॥

जा कारण जग ढूँढ़िया, सो तो घट ही माहिं ।

परदा दिया भरम का, ताते सूझो नाहिं ॥

जन्म मरण से रहित है, मेरा साहिब सोय ।

बलिहारी उस पीव की, जिन सिरजा सब कोय ॥

कबीर साहिब कह रहे हैं कि मेरा साहिब तो वो है, जो जन्म-मरण से रहित है अर्थात् जो बार-2 जन्म लेकर संसार में नहीं आता। वे कह रहे हैं कि मैं तो उस प्रियतम के बलिहारी जाता हूँ, जिसने सब कुछ

उत्पन्न किया हुआ है।

कबीर साहिब के अलावा अन्य बड़े-2 महापुरुष तथा अवतार भी यदि इस संसार में आए तो माता के पेट से जन्म लेकर ही आए और जाते समय अपना पार्थिव शरीर यहाँ छोड़कर ही गये; पर साहिब सबसे निराले रहे।

हम तो लखा तिहुँ लोक में, तुम क्यों कहा अलेख।

सार शब्द जाना नहीं, धोखे पहिरा भेख॥

साहिब कह रहे हैं कि हमने तो उसे तीन-लोक में देख लिया है; फिर तुम उसे अलेख क्यों कह रहे हो अर्थात् यह क्यों कह रहे हो कि वो दिखाई नहीं देता। सच तो यह है कि सार शब्द (सत्य-पुरुष) को जाने बिना साधु का भेष बनाकर तुमने धोखे में ही जीवन गंवा दिया।

बेचूने जग राँचिया, साहिब नूर निनार।

आखिर केरे वक्त को, किसका करै दीदार॥

सारा संसार परमात्मा को निराकार मानकर उसी में अनुरक्त हो गया है, पर वो साहिब तो शब्द प्रकाशी स्वरूप है। यदि तुम उसे निराकार कह रहे हो तो अन्त समय में मरने के बाद किसका दर्शन करोगे!

साहिब मेरा एक है, दूजा कहा न जाय।

दूजा साहिब जो कहूँ, साहिब खरा रिसाय॥

कबीर साहिब कह रहे हैं कि मेरा साहिब तो एक ही है; उसके समान दूसरा कोई नहीं है। अगर मैं उसके अलावा किसी दूसरे की बात कहूँ तो मेरा वो साहिब नाराज हो जाता है अर्थात् उसके समान दूसरा कोई नहीं है।

जाके मुँह माथा नहीं, नाहीं रूप अरूप।

पुहुप बास तैं पातला, ऐसा तत्व अनूप॥

उन साहिब के पंच भौतिक मुख नहीं है और न ही ऐसा ललाट है। वो न साकार है न निराकार। वो तो ऐसा सुन्दर और निराला तत्व है, जो कि फूल की खुशबू से भी पतला है।

निबल सबल को मारिकै, नाम धरा जगदीश।

कहै कबीर जन्मै मरै, ताहि धरुं नहिं सीस॥

साहिब कह रहे हैं कि जो बलवानों तथा कमजोरों को मारकर, रक्षक की कला दिखाकर 'परमात्मा' नाम पाता है और जो जन्म लेकर फिर मृत्यु को प्राप्त हो जाता है, वो मेरा साहिब नहीं हो सकता, इसलिए मैं उसके चरणों पर अपना शीश नहीं झुकाऊँगा।

तीन गुनन की भक्ति में, भूलि परयो संसार।

कहै कबीर निज नाम बिन, कैसे उतरै पार॥

सतगुण, रजगुण तथा तमगुण की भक्ति में सारा संसार भूला हुआ है। सतगुण, विष्णु जी को कहते हैं; रजगुण, ब्रह्मा जी को तथा तमगुण, शिवजी को। पर साहिब कह रहे हैं कि सद्गुरु द्वारा प्राप्त नाम (साहिब) के बिना तो संसार-सागर पार नहीं किया जा सकता।



तेरा मेरा मनवा कैसे एक होई रे।

मैं कहता हूँ आखन देखी,

तू कहता कागद की लेखी॥

सबद

सत्यलोक इक पुरुष अपारा

सत्यलोक इक पुरुष अपारा। चौथे पद के पार बिचारा ॥
तासु अंत जिव पुरुष नियारा। जाका पद चौथे के पारा ॥
ताके पुत्र भये पुनि भाई। सोला निरगुन तिन कर नाई ॥
सो निरगुन जो पुरुष से भैया। जामें लघू निरंजन कहिया ॥
ता को संत काल गोहरावै। सोई राम रमतीत कहावै ॥
सोई निरंजन कहिये काला। आदहि जोति बिछाई जाला ॥
पुरुष निरंजन जोती नारी। ये दोऊ मिलि सृष्टि रचा री ॥
तिन के पुत्र तीनि जो जाना। ब्रह्मा विष्णु ताहि कर नामा ॥
तीजे संभू छोटे भाई। तीन पुत्र या बिधि उपजाई ॥
निरंजन पिता जोति है माता। ये तीनों इनसे उतपाता ॥
रमतीता सोइ बुझौ काला। जोती काल रचा जंजाला ॥
ता के भये दसों अवतारा। काल अंस जग राम पसारा ॥
रमता राम कर्म के माहीं। रमतीत राम काल की छाहीं ॥
रमतीत काल ने जाल पसारा। रमता रहा राम भौ जारा ॥
राम कहौ सोइ मन है भाई। मनहिं राम जिन जक्त बुड़ाई ॥
राम काल सब संत पुकारा। जा को जपै यह युक्त लबारा ॥
ब्रह्मा विष्णु महेसर जाना। बेद कहे सोइ झूठ पुराना ॥
ये तीनों ने जाल पसारा। राम काल ने सब जग मारा ॥

राम काल को जपै बनाई। चर और अचर सभी चरखाई ॥
 राम काल को जपिहै भाई। जम बंधन भौ खान समाई ॥
 रमतीत काल जोति है ठगनी। तीन पुत्र उपजाये अपनी ॥
 सास्त्र वेद औ दस औतारा। ये सब जानी काल पसारा ॥
 या के मत में परिहै प्राणी। काल जाल ये यम की खानी ॥
 तीनि लोक जम जाल पसारा। वो दयाल पद इन से न्यारा ॥
 वो दयाल समरथ है दाता। सो पद को कोउ संत समाता ॥

अबधू कौन देस निरबाना

अबधू कौन देस निरबाना ॥
 आदि जोति तबै कछु नाहीं, नहिं रहे बीज अँकूरा।
 वेद कितेब तबै कछु नाहीं, नहिं पिंड ब्रह्माण्डा ॥
 पाँच तत्त गुन तीनों नाहीं, नहिं जीव अँकूरा।
 जोगी जती तपी सन्यासी, नहिं रहे सत सूरा ॥
 ब्रह्मा विष्णु महेसुर नाहीं, नहिं रहे चौदह लोका।
 लोक दीप की रचना नाहीं, तब कै कहो ठिकाना ॥
 गुप्त कली जब पुरुष उचारा, परगट भया पसारा।
 कहै कबीर सुनो हो अबधू, अधर नाम परवाना ॥

हे साधु, किस देश में पहुँचकर आत्मा निर्वाण पद को प्राप्त करती है? जब आदि ज्योति नहीं थी, बीज और अंकुर भी नहीं थे। वेद-कितेब का नामोनिशान नहीं था, न पिंड था और न ब्रह्माण्ड। जोगी, जती, तपस्वी, सन्यासी आदि कोई भी नहीं था। ब्रह्मा, विष्णु, महेश, 14 लोक आदि कुछ भी नहीं था। तब परम पुरुष ने गुप्त शब्द पुकारकर सारा पसारा प्रगट किया। हे साधु, सार नाम ही आत्मा को वहाँ पहुँचा सकता है।

पिय तोर बसत अमरपुर नगरी

सम्हारो सखी सुरति न फूटै गगरी ॥
 कोरा घड़ा नई पनिहारिन, सील सँतोष की लागी रसरी ॥
 इक हाथ करवा दूसर हाथ रसरी, त्रिकुटी महल की डगरी पकरी ॥
 निसु दिन सुरति घड़ा पर राखो, पिया मिलन की जुगति यहि री ॥
 कहै कबीर सुनो भाई साधो, पिय तोर बसत अमरपुर नगरी ॥

हंसा अमर लोक निज देसा

हंसा अमर लोक निज देसा ॥
 ब्रह्मा विष्णु महेसुर देवा, परे कर्म के भेसा ।
 जुगन जुगन हम आई चिताये, सार सब्द उपदेसा ॥
 सिव सनकादिन और नारद ह्वै, गै कर्म काल कलेसा ।
 आदि अंत से हमें न चीन्हे, धरत काल को भेसा ॥
 कोई कोई हंस सब्द बिचारे, निरगुन करे निबेरा ।
 सार सब्द हिरदे में झलके, सुख सागर को हेरा ॥
 पान परवाना सब्द बिचारे, नरियर लेखा पाये ।
 कहै कबीर सुख सागर पहुँचे, छूटे कर्म की फाँसा ॥

—कबीर साहिब

कह रहे हैं, हे हंस ! वो अमर लोक तुम्हारा अपना देश है । बाकी सारा संसार भ्रम में पड़ा हुआ है । मैंने युग-युग इस संसार में आकर चेताया; सार-शब्द का संदेश दिया, पर बड़े-बड़े भी कर्म के जाल में फँसे हुए मिले; कोई भी मुझे पहचान नहीं पाया । कोई बिरला हंस ही मिला, जिसने निर्गुण परमात्मा को छोड़ सार-शब्द को समझ हृदय में धारण किया । जिस-जिस ने भी सार-शब्द को समझकर मुझसे वो नाम प्राप्त किया, वो कर्म की फाँस से छूटकर सुख सागर में पहुँच गया ।

इनके परे बताया

सब का साक्षी मेरा साईं ।
 ब्रह्मा बिस्नु रुद्र ईसुर लौं, और अव्याकृत नाहीं ॥
 पाँच पचीस से सुमति करि ले, ये सब जग भरमाया ।
 अकार ओंकार मकार मात्रा, इनके परे बताया ॥
 जागृत सुपन सुषोपति तुरिया, इनतें न्यारा होई ।
 राजस तामस सातिक निर्गुन, इन तें आगे सोई ॥
 स्थूल सूक्ष्म कारन महाकारन, इन मिलि भोग बखाना ।
 बिस्व तेजस पराग आतमा, इन में सार न जाना ॥
 परा पसंती मधमा बैखरि, चौबानी नहिं मानी ।
 पाँच कोष नीचे करि देखो, इन में सार न जानी ॥
 पाँच ज्ञान औ पाँच कर्म हैं, ये दस इन्द्री जानो ।
 चित सोई अंतःकरन बखानी, इन में सार न मानो ॥
 कुरम सेस किरकिला धनंजय, देवदत्त कहँ देखो ।
 चौदह इन्द्री चौदह इन्द्रा, इन में अलख न पेखो ॥
 तत पद त्वं पद और असी पद, बाच लच्छ पहिचाने ।
 जहद लक्षणा अजहद कहते, अजहद जहिद बखाने ॥
 सतगुरु मिलै सत्य सबद लखावै, सार सबद बिलगावै ।
 कहै कबीर सोई जन पूरा, जो न्यारा करि गावै ॥

मेरा प्रभु सबका साक्षी है । वो कोई ब्रह्मा, विष्णु और महेश में से नहीं है और निराकार भी नहीं है । पाँच तत्व, 25 प्रकृतियों से बना सब कुछ जगत को भ्रमित करने के लिए है । वो ओंकार, अकार, मकार आदि से परे है । जाग्रत, स्वप्न, सुषुप्ति, तुरीया आदि अवस्थाओं से भी परे है । रजगुण, सतगुण, तमगुण और निर्गुण इन सबसे परे है । स्थूल, सूक्ष्म, कारण, महाराकण देहियों में भी भोग है, इसलिए इनमें भी सार नहीं है । 14 इंद्रियों से भी उसे नहीं देखा जा सकता है । जब पूरे सद्गुरु मिलते हैं तो वो सार शब्द का भेद देते हैं और फिर वो जीव ही इन सबसे परे होकर उस तत्व को पहचान पाता है ।

अविगति पुरुष काहू नहिं चीन्हा

कोटिन ब्रह्मा हो गये सिरायी। अविगत की गति काहु न पायी॥
 कोटिन ब्रह्मा पृथ्वी विलाने। अविगत की गति काहु न जाने॥
 कोटिन विष्णु गये सिरायी। फिर फिर कै पृथ्वीहु विलायी॥
 कोटिन रुद्र देह धरि लीना। अस्थिर होय जगत सो कीन्हा॥
 कोटिन इंद्र अवतार जो लीन्हा। अविगति पुरुष काहू नहिं चीन्हा॥
 गण गंधर्व नर कौन चलावैं। सनक सनन्दन पार न पावैं॥
 शेष नाग बहु भांति भुलाने। आदि पुरुष की खबरि न जाने॥
 सब परिवार जो भूले भाई। अवगति की गति काहु न पाई॥
 भुला देखि जिव दया न आई। जीव अनेक घात किहु भाई॥
 सब भूले कोई लागु न तीरा। महा अधम सो आहि शरीरा॥
 देह धरी सब भरमें आई। आपन आप सब करै बड़ाई॥
 अहमेव कैसे खोजेहु भाई। माता को कहा न कीनेहु भाई॥
 कीन्हो खोज तुम आपु गुमाना। नहिं पाये तब रहे लजाना॥
 खोज कीन्हो जब अन्त न पावा। तब तुम आप आप ठहरावा॥
 आपु दृढ़ाय थापना कीन्हा। सोई अहम् निर्गुण नहिं चीन्हा॥
 तुमरे भूले जगत भुलाना। आदि पुरुष को मर्म न जाना॥
 यहि विधि जग सब रहत भुलाई। टीका मूल काहु नहिं पायी॥
 तेतीस कोटि देव भुलाये। यहि भूले कोई गम्य न पाये॥

करोड़ों ब्रह्मा चले गये पर उस सत्य पुरुष का भेद किसी ने नहीं पाया। त्रिदेव, अवतार आदि कोई भी उसका भेद नहीं पा सका। जब निराकार का भी भेद नहीं मिल पाया तो सबने अपने अपने को ही परमात्मा स्थापित कर दिया। इस तरह परम पुरुष का भेद संसार में किसी को पता न चला। सारा संसार अपनी अपनी थापी हुई कृत्रिम भक्तियों में उलझ गया।

पिंड अंड के पार सो देस हमारा है

महा सुन्न सिंघ विषमी घाटी, बिन सतगुरु पावै नहीं बाटी ॥
 व्याघर सिंघ सरप बहु काटी, तहँ सहज अचिंत पसारा है ॥
 अष्ट दल कँवल पारब्रह्म भाई, दहिने द्वादस अचिंत रहाई ।
 बायें दस दल सहज समाई, यों कँवलन निरवारा है ॥
 पाँच ब्रह्म पाँचों अण्ड बीनो, पाँच ब्रह्म निःअच्छर चीन्हो ।
 चार मुकाम गुप्त तहँ कीन्हो, जा मध बंदीवन पुरुष दरबारा है ॥
 दो पर्वत के संघ निहारो, भँवर गुफा तें संत पुकारो ।
 हंसा करते केल अपारो, तहाँ गुरन दर्बारा है ॥
 सहस अठासी दीप रचाये, हीरे पन्ने महल जड़ाये ।
 मुरली बजत अखण्ड सदाये, तहँ सोहं झनकारा है ॥
 सोहं हृद तजी जब भाई, सत्य लोक की हृद पुनि आई ।
 उठत सुगंध महा अधिकाई, जा को बार न पारा है ॥
 कोटिन भानु उदय जो होई, ऐते ही पुनि चंद्र लखोई ।
 पुरुष रोम सम एक न होई, ऐसा पुरुष दीदारा है ॥
 आगे अलख लोक है भाई, अलख पुरुष की तहँ ठकुराई ।
 अरबन सूर रोम सम नाहीं, ऐसा अलख निहारा है ॥
 ता पर अगम महल इक साजा, अगम पुरुष ताहि को राजा ।
 खरबन सूर रोम इक लाजा, ऐसा अगम अपारा है ॥
 ता पर अकह लोक है भाई, पुरुष अनामी तहाँ रहाई ।
 जो पहुँचा जानेगा वाही, कहन सुनन से न्यारा है ॥
 काया भेद किया निर्बाना, यह सब रचना पिंड मँझारा ।
 माया अवगति जाल पसारा, सो कारीगर भारा है ॥
 आदि माया कीन्ही चतुराई, झूठो बाजी पिंड दिखाई ।
 अवगति रचन रची अँड माहीं, तो का प्रतिबिंब डारा है ॥
 सब्द बिहंगम चाल हमारी, कहैं कबीर सतगुरु तइ तारी ।
 खुले कपाट सब्द झनकारी, पिंड अंड के पार सो देस हमारा है ॥

सो वा लोकै जाई

कब गुरु मिलिहौ सनेही आई ॥
 लोभ मोह को जार बनो है, ता में रह्यो अरुझाय।
 जाकी साची लगन लगी है, सो वा घर को जाई ॥
 सुरति समानी सबद कुण्ड में, निरत रही लौ लाइ।
 पिया बिना यों प्यारी तलफै, तलफि तलफि जिंद जाई ॥
 चलो सखी वा देसै चलिये, जहाँ पुरुष को ठाँई।
 हंस हिरंवर चँवर दुरत हैं, तन की तपन बुझाई ॥
 कहैं कबीर सुनो भाई साधो, सबद सुनो चित लाई।
 नाम पान पाँजी जो पावै, सो वा लोकै जाई ॥

सो साहिब अलबेला

जिन पिया प्रेम रस प्याला, सोई जन है मतवाला ॥
 मूल चक्र को बंद लगावै, उलटि पवन चढ़ावै।
 जरा मरन भय व्यापै नाहीं, सतगुरु सरनी आवै ॥
 बिन धरनी हरि मंदिर देखा, बिन सागर झर पानी।
 बिन दीपक मंदिर उजियारा, बोलै गुरुमुख बानी ॥
 इंगला पिंगला सुखमन नाड़ी, उनमुन के घर मेला।
 अष्ट कँवल पर कँवल बिराजै, सो साहिब अलबेला ॥
 चाँद न सुरज दिवस न रजनी, तहाँ सुरति लौ लावै।
 चाँद सुरज एकै घरि राखै, भूला मन समुझावै।
 कहै कबीर सुनो भाई साधो, सहज सहज गुन गावै ॥

हंसा अमर लोक निज देसा

हंसा अमर लोक निज देसा ॥
 ब्रह्मा विष्णु महेसुर देवा, परे कर्म के भेसा।
 जुगन जुगन हम आई चिताये, सार सब्द उपदेसा ॥

सिव सनकादिन और नारद हैं, गै कर्म काल कलेसा ।
आदि अंत से हमें न चीन्हे, धरत काल को भेसा ॥
कोई कोई हंस सब्द बिचारे, निरगुन करे निबेरा ।
सार सब्द हिरदे में झलके, सुख सागर को हेरा ॥
पान परवाना सब्द बिचारे, नरियर लेखा पाये ।
कहै कबीर सुख सागर पहुँचे, छूटे कर्म की फाँसा ॥

—कबीरसाहिब

कह रहे हैं, हे हंस ! वो अमर लोक तुम्हारा अपना देश है । बाकी सारा संसार भ्रम में पड़ा हुआ है । मैंने युग-युग इस संसार में आकर चेताया; सार-शब्द का संदेश दिया, पर बड़े-बड़े भी कर्म के जाल में फँसे हुए मिले; कोई भी मुझे पहचान नहीं पाया । कोई बिरला हंस ही मिला, जिसने निर्गुण परमात्मा को छोड़ सार-शब्द को समझ हृदय में धारण किया । जिस-जिस ने भी सार-शब्द को समझकर मुझसे वो नाम प्राप्त किया, वो कर्म की फाँस से छूटकर सुख सागर में पहुँच गया ।

ए जियरा तैं अमर लोक को

ए जियरा तैं अमर लोक को, पर्यो काल बस आई हो ।
मनै सरूपी देव निरंजन, तोहि राख्यौ भरमाई हो ॥
पाँच पचीस तीन को पिंजरा, तामें तो को राखै हो ।
ता को बिसरि गई सुधि घर की, महिमा आपन गावै हो ॥
निरंकार निरगुन हैं माया, तो को नाच नचावै हो ।
चमर दृष्टि को कुलफी दीन्हो, चौरासी भरमावै हो ॥
चार वेद जा की है स्वासा, ब्रह्मा अस्तुति गावै हो ।
सो कथि ब्रह्मा जगत भुलाये, तेहि मारग सब धावै हो ॥
जोग जाप नेम ब्रत पूजा, बहु परपंच पसारा हो ।
जैसे बधिक ओट टाटी के, दे विस्वासै चारा हो ॥
सतगुरु पीव जीव के रक्षक, ता के करो मिलाना हो ।

जा से मिले परम सुख उपजै, पावो पद निर्वाणा हो ॥
 जुगन जुगन हम आय जनाई, कोई कोई हंस हमारा हो ।
 कहैं कबीर तहाँ पहुँचाऊँ, सत्य पुरुष दरबारा हो ॥

—कबीर साहिब

कह रहे हैं, हे हंसा ! तू तो अमर लोक का रहने वाला है, पर इस समय तू काल के वश में आ गया है। मन ही निरंजन देवता है, जिसने तुझे पाँच तत्वों से बने शरीर रूपी पिंजरे में डालकर भरमाया हुआ है। तुझे अपने सच्चे घर की सुधि भूल गयी है और यह काल अपनी महिमा ही संसार में गाता है। निर्गुण, निराकार तो माया है; वही तुझे नाना नाच नचा रही है; वही तुझे चौरासी में भरमा रही है। चार वेद तो मन निरंजन की स्वाँसा से उत्पन्न हुए हैं, ब्रह्मा जी ने जिसकी अस्तुति संसार में गाई है। सभी उसी मार्ग पर चल रहे हैं। योग, यज्ञ, तप, पूजा, व्रत आदि सब काल ने जाल फैलाया है। सद्गुरु ही जीव की रक्षा करने वाले हैं, इसलिए उन्हीं से मिलकर अपने जीव का कल्याण करके निर्वाण पद को प्राप्त करो। साहिब कह रहे हैं कि मैं तो युग-युग से आकर जीवों को चेता रहा हूँ, पर कोई-कोई हंस ही मेरा हो पाता है और जो हंस मेरी बात को मानकर मेरा हो जाता है, उसे मैं परम-पुरुष के दरबार में पहुँचा देता हूँ।

अवधू हंस देस है न्यारा

अवधू हंस देस है न्यारा ॥
 तीरथ ब्रत औ जोग जाप तप, सुरति निरति से न्यारा ।
 तीन लोक से बाहर डोलै, करम भरम पचि हारा ॥
 कोटि कोटि मुनि ब्रह्मा होइगे, कोई न पाये पारा ।
 मंतर जाप उहाँ ना पहुँचै, सुरति करो दरबारा ॥
 सुख सागर में बासा कीजै, मुकता करो अहारा ।
 बंकनाल चढ़ि गरजन गरजै, सतगुरु अधर अधारा ॥

कहै कबीर सुनो हो अवधू, आप करो निरवारा ।
हंसा हमरे मिले हंसन में, पुनि न लखे भवजारा ॥

नहीं दिवस नहीं रात

चाँद सूरज पानी पवन नहीं दिवस नहीं रात ॥
नहीं दिवस नहीं रात नहीं उतपति संसारा ।
ब्रह्मा विष्णु महेस नाहिं तब किया पसारा ॥
आदि जोति बैकुण्ठ सुन्य नाहीं कैलासा ।
सेस कमठ दिग्पाल नाहिं धरती आकासा ॥
लोक वेद पलटू नहीं कहों मैं तबकी बात ।
चाँद सूरज पानी पवन नहीं दिवस नहीं रात ॥

—पलटू साहिब

कह रहे हैं कि मैं तबकी बात कह रहा हूँ, जब चाँद, सूर्य, पानी, पवन, रात, दिन आदि नहीं थे; जब ब्रह्मा, विष्णु और महेश भी नहीं थे; जब आदि ज्योति भी नहीं थी, वैकुण्ठ भी नहीं था, शून्य भी नहीं था । धरती, आकाश और शेष आदि भी नहीं थे । यानी ये सब बाद में बने हैं, परमात्मा का रहस्य कुछ और ही है ।

चौथ लोक कै मरम न जाना

भेदि निरखि लेहु सो निजु सारा । चाँदी जारहु अँउट कसारा ॥
खोटा काँजी दुरि कर दीन्हा । असल ज्ञान निजु परचै लीन्हा ॥
साहब परचै दीन्ह देखाई । सब्द भेद निजु कहा बुझाई ॥
सतगुरु गुरु की रहनि निनारा । मिलै सब्द पावै निजुसारा ॥
चौजुग चारि जो कीन्ह निमेरा । जो बूझै सो पहुँच सबेरा ॥
तीनि लोक जब जालिम घेरा । मुनि पंडित भौ जम कै चेरा ॥
सत्य पुरुष सत्य लोकहिं डेरा । कया कबीर करहिं जग फेरा ॥

अभय लोक जहँ भय नहिं होई । अमृत प्रेम पियै सब कोई ॥
जाहि लोक तें हम चलि आई । ताहि लोक बिरला जन जाई ॥
ज्ञान कथे जिनि भूलै कोई । सबद बिचार करहि नर लोई ॥
मोहिं से पूँछहु ज्ञान करारा । आदि अंत कहाँ बिस्तारा ॥
तीनि लोक वेद इह कहई । चौथे लोक पुरुष ओइ रहई ॥
अजर अमर लोक बिस्तारा । ई सब किरतम कीन्ह पसारा ॥
हरि भगतन भगताई कीन्हा । तिरगुन फँद तेह नहिं चीन्हा ॥
तिरगुन ते है ओइ गुन न्यारा । अजर अमर हहिं सत्य करतारा ॥
हंस बंस तहँ पहुँचै जाई । अजर अमर तहाँ होइ जाई ॥
सत्य सबद जो करि बिबेका । आदि अंत काया महँ देखा ॥
सत्य सब्द बूझै चित लाई । सो हंसा निर्मल होइ जाई ॥
अमर लोक महँ पहुँचै दासा । देखहि अविगति अजब तमासा ॥
सतगुरु सब्दहि मानु सुभागा । निर्मल होय मल कबहिं न लागा ॥
गर्व गुमान भूले सब ज्ञानी । विद्या वेद पढ़ि मरम न जानी ॥
मोटा मन का फिरै गँवारा । जो मन मिलै मिलै करतारा ॥
पानी पवनहुँ ते मन तेजा । जहाँ कहो तहवाँ मन भेजा ॥
सो मन मिलेऊ दरिया दासा । सबद देखि मिटि जम के त्रासा ॥
तीनि लोक तो वेद बखाना । चौथे लोक कै मरम न जाना ॥

—दरिया साहिब (बिहार वाले)

कह रहे हैं कि जैसे धातु को जलाकर स्वच्छ चाँदी निकाल ली जाती है, ऐसे ही खोटे मिश्रित ज्ञान को दूर करके असल ज्ञान का परिचय प्राप्त करो । मैं साहिब का परिचय दे रहा हूँ और नाम का भेद भी बता रहा हूँ । सतगुरु की रहनी निराली है; जब नाम मिलेगा तो यह भेद मालूम होगा । तीन-लोक में तो काल का जाल है; यहाँ सब काल के चेले हैं । पर चौथे लोक में परम-पुरुष रहता है, जहाँ पहुँचकर आत्मा अमृत पान करती है । जो सद्गुरु के सत्य-शब्द को मानकर उसे पहचान ले, वो निर्मल होकर उसे पा लेता है । बाकी ज्ञानी आदि तो पढ़-पढ़कर मिथ्या

अभिमान में भूले रहते हैं, उन्हें सच्चा साहिब नहीं मिलता। क्योंकि वेदों में तो तीन-लोक का ही वर्णन है; वो चौथे लोक का भेद नहीं देता है।

सुरति से देखि ले वहि देस

सुरति से देखि ले वहि देस ॥
देखत देखत दीसन लागे, मिटिगे सकल अँदेस ॥
वहँ नहिं चन्द वहाँ नहिं सूरज, नाहिं पवन परवेस ॥
वहँ नहिं जाप वहाँ नहिं अजपा, निःअच्छर परबेस ॥
वहँ के गये बहुरि नहिं आये, नहिं कोउ कहा सँदेस ॥
कहै कबीर सुनो भाई साधो, गहु सतगुरु उपदेस ॥

—कबीरसाहिब

कह रहे हैं कि सुरति से उस अमर-लोक को देख लो। वहाँ चाँद, सूर्य आदि कुछ भी नहीं है। वहाँ जाप, अजपा की स्थिति भी नहीं है। वहाँ जाकर फिर वापिस नहीं आना है। लेकिन वहाँ का संदेश कोई नहीं देता है। साहिब कह रहे हैं कि मेरी बात को सुनकर उसपर विचार करो और सद्गुरु का उपदेश ग्रहण करो।

ना जानें तेरा साहिब कैसा है

ना जानें तेरा साहिब कैसा है ॥
मस्जिद भीतर मुल्ला पुकारै, क्या साहिब तेरा बहिरा है।
चिउँटी के पग नेवर बाजै, सो भी साहिब सुनता है ॥
पंडित होय के आसन मारै, लम्बी माला जपता है।
अंतर तेरे कपट कतरनी, सो भी साहिब लखता है ॥
ऊँचा नीचा महल बनाया, गहिरी नेंव जमाता है।
चलने का मनसूबा नाहीं, रहने को मन करता है ॥
कौड़ी कौड़ी माया जोड़ी, गाड़ि जमीं में धरता है।
जिस लहना है सो लै जैहै, पापी बहि बहि मरता है ॥

हीरा पाय परख नहिं जानै, कौड़ी परखन करता है।

कहत कबीर सुनो भाई साधो, हरि जैसे को तैसा है॥

—कबीर साहिब

दिखावे का खण्डन करते हुए कह रहे हैं कि पता नहीं, तेरा साहिब कैसा है! हे मुल्ला! तुम तो खुदा को ऐसे आवाजें लगाते हो, मानो तुम्हारा खुदा बहरा हो, उसे सुनाई नहीं देता है। वो तो चींटी के पैरों की पायल की आवाज़ भी सुन लेता है। यानी उसे तो चींटियों के पाँव की आवाज़ भी सुनाई पड़ जाती है। मन की आवाज़ भी वो सुन लेता है।

दूसरी ओर पंडितों को कह रहे हैं कि आप तो आसन मारकर बड़ी लंबी माला जपते हैं, पर यदि दिल में आपके खोट होगा तो साहिब वो भी देख लेता है। यह मनुष्य तो ऊँचा महल बनाकर बड़ी गहरी नींव डालता है। यह तो ख़बर नहीं है कि कब यहाँ से जाना पड़े, पर यह तो यहीं रहने का मन बनाकर हुए बड़े-2 महल बना रहा है। कौड़ी-2 जोड़कर ज़मीन में गाड़ता है; जिसने लेना है, वो तो चुराकर ले जायेगा; यह ऐसे ही बेकार में पाप कर्मों द्वारा जोड़ता रहता है। यह भक्ति रूपी हीरे की पारख तो जानता नहीं, फिर कौड़ी (माया—सोना, हीरा आदि) की पारख करता है। साहिब कह रहे हैं कि प्रभु तो जैसे का तैसा ही है। यानी जिसका मन जहाँ लगा है, वही उसका प्रभु है; वो वहीं समाएगा।

चल हो सजन वो देस अमर है

उतर दिसा पंथ अगम अगोचर, अधर अंग इक देस हो।
चल हो सजन वो देस अमर है, जहाँ हंसन को बास हो॥
आवै जाय मरै ना कबहूँ, रहै पुरुष के पास हो।
आलस मोह एको नहिं व्यापै, सुपन सुरति जास हो॥
पीवो हंस अमृत सुख धारा, बिन सुरही के दूध हो।
संसय सोग कछू नहिं मन में, बिन मुक्ता गुन सूझ हो॥
सेत सिंहासन सेत बिछौना, जहाँ बसै पुरुष हमार हो।
अच्छर मूल सदा मुख भाखौ, चित दे गहहु सुहाग हो॥

आवे न जावे मरे न जन्मे सोई सत्यपुरुष हमारा है

सेत तँबूल समरथ मुख छाजै, बैठे लोक मंझार हो।
हंसन के सिर मुकुट बिराजै, मानिक तिलक लिलार हो॥
आमिनि हूँ उतरे भवसागर, जिन तारे कुल बंस हो।
सतगुरु भाव कछनी तन कपरा, मिलि लेहु पुरुष कबीर हो॥

चौथा लोक पुरुष है न्यारा

काल महाकाल है दोई। महाप्रलय में रहे न कोई॥
तब रहि है निःअक्षर सारा। सो है सबका सिरजनहारा॥
आदि शक्ति निरंजन देवा। सिद्ध साधु लागे तेहि सेवा॥
अष्ट कर्म के दाता वोई। कर्म करे भुक्तावे सोई॥
निःअक्षर है अलख अनामी। शक्ति निरंजन के सो स्वामी॥
पाँच तत्व गुण तीन सँवारा। सो यह आदि शक्ति विस्तारा॥
तीन लोक शक्ति निरधारा। चौथा लोक पुरुष है न्यारा॥
सातों लोक पुरुष विस्तारा। पुरुष पुरातन अगम अपारा॥

कह रहे हैं कि महाप्रलय में काल, महाकाल कोई भी नहीं रहेगा।
रहेगा तो केवल वो सत्य-नाम ही रहेगा। वही सबका उत्पत्तिकर्त्ता है। पर
सभी सिद्ध, साधु आदि आद्य-शक्ति और निरंजन की ही सेवा में लगे हुए
हैं। ये दोनों ही आठ तरह के कर्मों के अधिष्ठाता हैं। कर्मों का फल देने
वाले भी ये ही हैं। पर निःअक्षर नाम आद्य-शक्ति और निरंजन दोनों का
स्वामी है। ये जो पाँच तत्व और तीन गुण हैं, ये तो आद्य-शक्ति ने फैलाए
हैं। अर्थात् ये सब माया है। तीन लोक में जो भी है, माया है; पर चौथे
लोक में न्यारा पुरुष रहता है। वही अगम-पुरुष है। उसी ने महाशून्य के
सातों लोकों की रचना की है।

छप लोक सब ऊपर होई

छप लोक सब ऊपर होई। पावै अमृत जुग जुग सोई॥
जाँ गुरु ज्ञान मिलै निजु सारा। ज्ञान गम्भीर का करै बिचारा॥

तीनि लोक है मन कर ठाटा। मनहिं बिसंभर रोकै बाटा ॥
 ऐसन जीवन जीवै जोगी। सब्द नाम तन रहै बियोगी ॥
 मुवै न जिवै आवै नहिं जाई। सब घट आपै चुनि चुनि खाई ॥
 देखै कोई नहिं सभै चोरावै। मुनि ज्ञानी कोई भेद न पावै ॥
 बड़े जोगी यह जोग बिधाना। उनहुँ के घैंच मारि यम बाना ॥
 कोई नहिं बाचे यम के फाँसा। जो न होय सतगुरु कै दासा ॥
 सतगुरु कै गति पावै कोई। जाय छप लोक सिधारे सोई ॥
 गहै प्रेम होय निर्मल सरीरा। मेटि जाय सब जम कै पीरा ॥
 —दरिया साहिब (बिहार वाले)

कह रहे हैं कि अमर लोक सबसे ऊपर है। जो वहाँ पहुँचता है, वो अमृत का पान करता है। तीन लोक तो मन का स्थान है, यही अमर लोक का रास्ता रोके हुए है। यह सबके घट में समाया हुआ है और सब जीवों को चुन-चुनकर खा जाता है। ज्ञानी, मुनि, पंडित आदि कोई भी इसका भेद नहीं पाता है। बिना सद्गुरु की शरण में आए इससे नहीं बचा जा सकता है। जो सद्गुरु से सच्चा नाम पा लेता है, वो काल के सब कष्टों से छूटकर अमर लोक चला जाता है।

हंसा सुधि करो आपन देश

हंसा सुधि करो आपन देश ॥
 जहाँ से आयो सुधि बिसरायो, चले गयो परदेश ॥
 वहि देशवा में जोते न बोवै, मोती फरे हमेश ॥
 वहि देसवा में मरै न बिगड़े, दुख न पड़त कलेश ॥
 चलो हंसा बसो मान सरोवर, मोती चुगो हमेश ॥
 कहत कबीर सुनो भाई साधो, अजर अमर वह देश ॥

हे हंसा, अपने देश को याद कर वहाँ चल। तू परदेस में आकर अपने देश की सुधि खो बैठा है। वहाँ बिना बोये सदैव मोती उगते हैं। वहाँ न जन्म है, न मरण है, न कोई दुख ही है। वो एक अमर देश है।

साहिब तेरे पास

साहिब साहिब क्या करै, साहिब तेरे पास।
 साहिब तेरे पास, याद करु होवै हाज़िर।
 अंदरि धसि कै देखु, मिलेगा साहिब नादिर।
 मान मनी हो फना, नूर तब नज़र में आवै।
 बुरका डारै टारि, खुदा बाखुद दिखलावै।
 रूह करै मेराज, कुफर का खोलि कुलाबा।
 तीसौ रोज़ा रहै, अंदर में सात रिकाबा।
 लामकान में रब्ब को, पावै पलटूदास।
 साहिब साहिब क्या करै, साहिब तेरे पास॥

—पलटू साहिब

साहिब कहीं बाहर नहीं है; वो तो तेरे भीतर ही रहता है। प्रेम से उसे याद करके देख ले, वो हाज़िर हो जायेगा। जब तू अहंकार को त्यागकर अपने भीतर में प्रविष्ट होगा, तभी उसका नूर दिखाई देगा। 'मैं' का घूँघट हटाकर तो देख, वो खुद सामने आ जायेगा। ऐसे मैं अंदर के सात मुकामों को पार करती हुई रूह अपने देश में चली जायेगी।

हम बासी उस देश के

हम बासी उस देश के पूछता क्या है,
 चाँद ना सूरज ना दिवस रजनी।
 तीन की गम्य नहिं नाहिं करता करै,
 लोक ना बेद ना पवन पानी॥
 सेस पहुँचै नहीं शक्ति भइ सारदा,
 ज्ञान ना ध्यान ना ब्रह्म ज्ञानी।
 पाप ना पुन्र ना सरग ना नरक है,
 सुरति ना सबद ना तीन तानी॥

अखिल ना लोक है नाहिं परजंत है,
 हद अनहद ना उठै बानी।
 दास पलटू कहै सुन्न भी नाहिं है,
 संत की बात कोउ संत जानी॥

—पलटू साहिब

पलटू साहिब कह रहे हैं कि हम तो उस अमर लोक के वासी है, जहाँ सूर्य-चाँद, रात-दिन आदि नहीं हैं, जहाँ त्रिदेव भी नहीं हैं और सृष्टि का कर्त्ता मन भी नहीं है। न लोक है, न वेद है, न पवन है, न पानी है, शेष, शारदा आदि की पहुँच से परे है वो देश। जहाँ ज्ञान, ध्यान आदि भी नहीं हैं और न ही ब्रह्म ज्ञानी है। पाप-पुण्य, स्वर्ग-नरक भी नहीं हैं। सुरति, शब्द, लोकालोक, शून्य, अनहद धुनें, वाणी आदि भी वहाँ नहीं हैं। पलटू साहिब कह रहे हैं कि संतों की ये बातें कोई संत ही समझ सकता है।

सखिया वा घर सबसे न्यारा

सखिया वा घर सबसे न्यारा, जहाँ पूरन पुरुष हमारा॥
 जहँ नहिं सुख दुख साँच झूठ नहिं, पाप न पुण्य पसारा।
 नहिं दिन रैन चंद नहिं सूरज, बिना जोति उजियारा॥
 नहिं तहँ ज्ञान ध्यान नहिं जप तप, वेद कितेब न बानी।
 करनी धरनी रहनी गहनी, ये सब जहाँ हिरानी॥
 धर नहिं अधर न बाहर भीतर, पिंड ब्रह्माण्ड कछु नाहीं।
 पाँच तत्व गुन तीन नहीं तहँ, साखी शब्द न ताहीं॥
 मूल न फूल बेलि नहिं बीजा, बिना बृच्छ फल सोहै।
 ओअं सोहं अर्ध उर्ध नहिं, स्वासा लेख न कोहै॥
 नहिं निगुर्ण नहिं सर्गुन भाई, नहीं सूक्ष्म स्थूलं।
 नहिं अच्छर नहिं अविगत भाई, ये सब जग के मूलं॥

आवे न जावे मरे न जन्मे सोई सत्यपुरुष हमारा है

जहाँ पुरुष तहवाँ कछु नाहीं, कहै कबीर हम जाना।
हमरी सैन लखै जो कोई, पावै पद निरवाना॥

—कबीर साहिब

अमर लोक की बात निराली है।

पार ब्रह्म सो न्यारा

अवधू छाड़ हू मन बिस्तारा।
सो पद गहो जाहि तो सद्गति, पारब्रह्म सो न्यारा॥
नहीं महादेव नहीं मुहम्मद, हरि हजरत किछू नाहीं।
आदम ब्रह्म किछुवो नहिं होते, नहीं धूप नहिं छाहीं॥
असी आसै पैगंबर नहिं होते, सहस अठासी मूनी।
चंद सूरज तारागन नाहीं, मच्छ कच्छ नहिं दूनी॥
वेद कितेब सुप्रित नहिं संजम, नहिं जीवन परछाहीं।
बंग निमाज कलिमा नहिं होते, रामहुँ नाहिं खोदाई॥
आदि अंत मन मध्य न होते, आतस पवन न पानी।
लख चौरासी जीउ जन्तु नहिं, साखी सब्द न बानी॥
कहैं कबीर सुनो हो अवधु, आगे करहु बिचारा।
पूरन ब्रह्म कहाँ ते परगटे, किरतम किन उपराजा॥

साहिब कह रहे हैं—हे सन्यासी! मन की सीमा को छोड़ो और पारब्रह्म से परे उस साहिब की भक्ति करो, जिससे महानिर्वाण पद की प्राप्ति हो सके। वहाँ ना महादेव है, ना मुहम्मद है, ना विष्णु जी हैं, ना हजरत। मनुष्य, ईश्वर, दिन-रात आदि कुछ भी वहाँ नहीं है और न ही मत्स्य, कच्छ आदि अवतार हैं। वेद, कितेब, स्मृति, संयम, जीवन आदि की छाया भी नहीं है। बाँग देने की ज़रूरत नहीं किसी को वहाँ, नमाज़

पढ़ने की ज़रूरत नहीं है और न ही कलमा करने की आवश्यकता है । वहाँ ना राम है और न खुदा । वहाँ आदि, अंत, मन आदि भी नहीं हैं और अग्नि, पवन, पानी आदि तत्व भी नहीं । चौरासी लाख योनियों के जीव भी वहाँ नहीं हैं और साखी, सबद, वाणियाँ भी नहीं हैं । साहिब कह रहे हैं—हे सन्यासी ! मन की सीमा के आगे विचार करो और पूर्ण ब्रह्म निरंजन कहाँ से प्रगट हुआ और झूठी सृष्टि की, बनावटी सृष्टि का विस्तार किसने किया, इस पर विचार करो । कहने का भाव है कि साहिब ने ही तीन लोक के स्वामी निरंजन की उत्पत्ति की और इसने बुरा बेटा बनकर झूठी सृष्टि की रचना कर डाली ।

अखिल खिलै नहिं का कहि पंडित

अखिल खिलै नहिं का कहि पंडित, कोई न कहै समुझाई ।
 अबरन बरन रूप नहिं जा के, कहँ लौ लाइ समाई ॥
 चंद सूर नहिं रात दिवस नहिं, धरनि अकास न भाई ।
 करम अकरम नहिं सुभ आसुभ नहिं, का कहि देहुँ बड़ाई ॥
 सीत बायु ऊसन नहिं सरवत, काम कुटिल नहिं होई ।
 जोग न भोग क्रिया नहिं जा के, कहौ नाम सत सोई ॥
 निरंजन निराकार निरलेपी, निरवाकार निसासी ।
 काम कुटिलता ही कहि गावैं, हर हर आवै हाँसी ॥
 गगन धूर धूप नहिं जा के, पवन पूर नहिं पानी ।
 गुन निर्गुन कहियत नहिं जाके, कहौ तुम बात सयानी ॥
 याही सों तुम जोग कहते हौ, जब लग आस की पासी ।
 छुटै तबहि जब मिलै एकही, मन रैदास उदासी ॥

—रविदास जी

धर्मनि वा देस हमारो बासा

धर्मनि वा देस हमारो बासा । जहँ हंसा करै बिलासा ॥
 सात सुन्न के ऊपर साहेब, सेतै सेत निवासा ।
 सदा आनन्द रहै वा देसा, कबहुँ न लगै उदासा ॥
 सूरज चंद दिवस नहिं रजनी, नाहीं धरनि अकासा ।
 ऐसा अमर लोक है अवधू, केवला फरै बारामासा ॥
 ब्रह्मा विष्णु महेसुर कहिये, थके जोति के पासा ।
 चौथा लोक बसै जम पारा, यह सब काल तमासा ॥
 उहाँ के गये बहुरि ना अड़हौ, आवागमन भय नासा ।
 ब्रह्म अखंडित साहेब कहिये, आपु में आपु प्रगासा ॥
 कहैं कबीर सुनो हो धर्मनि, छाँड़ो खल कै आसा ।
 अमृत भोजन हंसा पावै, बैठि पुरुष के पासा ॥

—कबीरसाहिब

साहिब धर्मदास को अमर देश की बात बताते हुए कह रहे हैं, हे धर्मदास ! मैं उस देश में रहता हूँ, जहाँ हंस हर समय आनन्द में मग्न रहता है । वो स्थान सात शून्य के भी आगे है, जो श्वेत ही श्वेत है । वहाँ हर समय आनन्द ही आनन्द है, कभी उदासी नहीं है । चाँद, सूर्य, दिन, रात, धरती और आकाश कुछ भी वहाँ नहीं है । वो एक अमर लोक है । त्रिदेव भी ज्योति के पास पहुँचकर थक जाते हैं, उनकी पहुँच वहीं तक है, पर चौथा लोक काल से परे है, बाकी तीन लोक में काल का ही खेल है । जो वहाँ पहुँच जाता है, फिर वापिस काल की दुनिया में नहीं आता । उसका आवागमन का भय समाप्त हो जाता है । उसे 'साहिब' कहा जाता है और वो स्वयं प्रकाशित है । साहिब धर्मदास से कहते हैं कि तुम दुष्ट काल की आशा छोड़ दो और उस लोक में चलो, जहाँ परम-पुरुष के पास बैठकर हंसा अमृत भोजन करता है ।

चलो जहँ देस है तोरी

घड़ा एक नीर का फूटा। पत्र एक डार से टूटा ॥
 ऐसहि नर जात जिंदगानी। अजहु नहिं चेत अभिमानी ॥
 भुलो जनि देख तन गोरा। जगत में जीवना थोरा ॥
 निकरि जब प्रान जावैगा। कोई नहिं काम आवैगा ॥
 सजन परिवार सुत दारा। सभै एक रोज होइ न्यारा ॥
 तजो मद लोभ चतुराई। रहो निरसंक जग माहीं ॥
 सदा ना जान ये देही। लगावो नाम से नेही ॥
 कहै धर्मदास कर जोरी। चलो जहँ देस है तोरी ॥

—धर्मदास जी

कह रहे हैं कि जैसे पानी का घड़ा फूट जाता है, डाली से पत्ता टूटकर गिर जाता है, ऐसे ही यह जीवन भी चला जायेगा। इसलिए किसी भी बात का घमण्ड नहीं करो। जब प्राण इस शरीर से निकल जायेंगे तो कोई काम नहीं आयेगा; स्त्री, बेटा, परिवार आदि सबसे जुदा होना पड़ेगा। इसलिए इन सबका मोह छोड़ो; सच्चे नाम से प्रीत करो और उस देश (अमर लोक) में चलो, जो तुम्हारा अपना है।

वो खुदाय क्या दूर है जी

खुदी को छाड़ि खुदाय को याद कर,
 वो खुदाय क्या दूर है जी ॥
 खुद बोलते को तहकीत करि ले,
 हर दम हजूर ज़रूर है जी ॥
 ठौर ठौर क्या भटकत फिरो,
 करो गौर तुम हीं में नर है जी ॥
 कबीर का कहना मान ले अब,
 परवाना सहित मंजूर है जी ॥

—कबीर साहिब

कह रहे हैं कि अपनी 'मैं' को छोड़कर परमात्मा को याद करो। वो कहीं दूर नहीं है, वो तुम्हारे अंदर में ही है। इसलिए बाहर मत भटक।

साहिब वह कहाँ है

पूरब में राम है पच्छिम खुदाय है,
 उत्तर और दक्खिन कहो कौन रहता।
 साहिब वह कहाँ है कहाँ फिर नहीं है,
 हिन्दू और तुरक तोफान करता ॥
 हिन्दू और तुरुक मिलि परे हैं खैचि में,
 आपनी बग दोउ दीन बहता।
 दास पलटू कहै साहिब सब में रहै,
 जुदा न तनिक मैं साँच कहता ॥

—पलटू साहिब

कह रहे हैं कि यदि पूर्व में राम है और पश्चिम में खुदा का वास है तो उत्तर और दक्षिण में भला किसका वास है! वो साहिब तो हरेक की आत्मा में वास करता है; किसी से भी तनिक भी जुदा नहीं है; पर ये लोग बेकार में ही उसे कहीं-कहीं बताकर तूफान खड़ा करते हैं।

उहवाँ के हम बासी

साधो भाई उहवाँ के हम बासी, जहवाँ पहुँचै नहिं अबिनासी ॥
 जहवाँ जोगी जोग न पावै, सुरति सबद नहिं कोई।
 जहवाँ करता करे न पावै, हम हीं करैं सो होई ॥
 ब्रह्मा बिस्नु नाहिं गमि सिव की, नहीं तहाँ अबिनासी।
 आदि जोति उहाँ अमल न पावै, हमहीं भोग बिलासी ॥
 त्रिकुटी सुन्न नाहिं है उहवाँ, दंडमेरु ना गिरिवर।

सुखमन अजपा एकौ नाहीं, बंकनाल ना सरवर ॥
जहवाँ पाँच तत्त ना स्वासा, जगमग झिलिमिलि नाहिं ।
पलटूदास की औघट घाटी, बिरला गुरुमुख जाहीं ॥

—पलटूदास जी

पलटू साहिब कह रहे हैं कि हम तो वहाँ के निवासी हैं, जहाँ निराकार परमात्मा भी नहीं पहुँच सकता है। जहाँ जोगी योग नहीं करता है, जहाँ न सुरति है, न शब्द है। जहाँ कर्त्ता कुछ नहीं कर सकता है, हम (संत) जो करें, वही होता है। वहाँ ब्रह्मा, विष्णु, महेश और ज्योति स्वरूपी परमात्मा भी नहीं है। वहाँ का भोग हमहीं करते हैं। वहाँ त्रिकुटी, मेरुदण्ड, शून्य, आदि भी नहीं है। वहाँ सुषुम्ना नाड़ी, अजपा जाप, बंकनाल आदि भी नहीं हैं। यानी ध्यान के केंद्र बिंदू भी नहीं हैं, ध्यान की स्थिति नहीं है। वहाँ पाँच तत्व भी नहीं हैं और स्वाँसा भी नहीं है, जगमगाती हुई ज्योति भी नहीं है। पलटू साहिब कह रहे हैं कि वहाँ का रास्ता बड़ा ही कठिन है, वहाँ कोई बिरला गुरुमुख ही जा सकता है।

रंग रूप नहीं रेख

पलटू कहै साँच कै मानौ, और बात झूठ कै जानौ ।
जहवाँ धरती नाहिं अकासा, चाँद सूरज नाहीं परगासा ।
जहवाँ पवन जाय ना पानी, वेद कितेब मरम न जानी ।
जहवाँ ब्रह्मा विष्णु न जाहीं, दस औतार न तहाँ समाहीं ।
आदि जोति ना बसै निरंजन, जहवाँ शून्य शब्द नहिं गंजन ।
निराकार ना उहाँ अकारा, सत्य शब्द नाहीं बिस्तारा ।
जहवाँ जोगी जोग न पावै, महादेव ना तारी लावै ।
उहवाँ हृद अनहृद ना जावै, बेहृद वह रहनी ना पावै ।
जहवाँ नाहिं अग्नि प्रकाशा, पाँच तन्तु ना चलता स्वाँसा ।
ब्रह्म ज्ञान ना पहुँचे उहवाँ, अनुभौ पद ना बोलै तहवाँ ।
सात सर्ग अपवर्ग न होई, पिंड उहाँ ब्रह्माण्ड न कोई ।

जहवाँ करता करै न पावै, सिद्ध समाधि ध्यान ना लावै ।
 अजपा गिरा लंबिका नाहीं, जगमग झिलमिल उहाँ न जाहीं ।
 सोहं सोहं उहाँ न बोलै, चलै न जुक्ति सुरति ना डोलै ।
 उहवाँ नाहिं रहै अविनासी, पूरन ब्रह्म सकै ना जासी ।
 निरभौ नाद नहीं ओंकारा, निर्गुण रूप नहीं बिस्तारा ।
 पलटूदास तहाँ चलि गया, आगे ह्वै पीछै ना भया ।
 पलटू देखि हाथ को मलै, आगे कहै तो परदा खुलै ।
 आदि अन्त अरु मध्य नहिं, रंग रूप नहिं रेख ।
 गुप्त बात गुप्तै रही, पलटू तोपा देख ॥

—पलटू साहिब

जो मैं कह रहा हूँ, उस बात को बिलकुल सच मानना । इसके बिपरीत जो बात है, से झूठ ही समझना । कह रहे हैं कि जहाँ धरती, आकाश, चाँद, सूर्य आदि का प्रकाश नहीं है । जहाँ पवन और पानी नहीं हैं । जहाँ का भेद वेद, कितेब भी नहीं जानते हैं । जहाँ, ब्रह्मा, विष्णु आदि भी नहीं जा सकते । जहाँ दस अवतार भी नहीं समाए । आदि शक्ति, ज्योति निरंजन भी जहाँ नहीं हैं । जहाँ शून्य महाशून्य और अनहद शब्द भी नहीं हैं । जहाँ निरकार, साकार आदि भी नहीं हैं । जहाँ योगियों की पहुँच भी नहीं है । शिवजी का ध्यान भी जहाँ नहीं पहुँचता । जहाँ पाँच तत्व भी नहीं हैं । जहाँ स्वांस भी नहीं चलती है । ब्रह्म ज्ञान भी जहाँ नहीं पहुँचता है । सात स्वर्ग, पिंड, ब्रह्माण्ड आदि भी जहाँ नहीं हैं । सिद्ध, साधक आदि किसी की पहुँच नहीं है । जगमग ज्योति भी जहाँ नहीं है । सोहं शब्द का उच्चारण भी नहीं है । जहाँ पूरण ब्रह्म भी नहीं जा सकता है । वहाँ अविनाशी परमात्मा (निरंजन) भी नहीं रहता, वहाँ मैं चला गया । फिर वहाँ देखकर दंग रह गया । आगे कुछ कहूँगा तो गुप्त भेद खुल जायेगा । उसका कोई आदि, अन्त और मध्य नहीं है । न ही उसका कोई रंग, रूप और रेखा है ।

कहन सुनन से न्यारा है

तू सूरत नैन निहार, यह अंड के पारा है ।
 तू हिरदे सोच बिचार, यह देस हमारा है ॥
 पहिले ध्यान गुन का धारो, सुरत निरत मन पवन चितारो ।
 सहेलना धुन में नाम उचारो, तब सतगुरु लहो दीदारा है ॥
 सतगुरु दरस होइ जब भाई, वे दें तुम को नाम चिताई ।
 सुरत शब्द दोऊ भेद बताई, तब देखे अंड के पारा है ॥
 सतगुरु कृपा दृष्टि पहिचाना, अंड सिखर बेहद मैदाना ।
 सहज दास तहँ रोपा थाना, जो अग्रदीप सरदारा है ॥
 सात सुन्न बेहद के माहीं, सात संख तिन की ऊँचाई ।
 तीनि सुन्न लौं काल कहाई, आगे सत्य पसारा है ॥
 प्रथम अभय सुन्न है भाई, कन्या निकल यहँ बाहर आई ।
 जोग संतायन पूछो वाही, ममदारा वह भरतारा है ॥
 दूजे सकल सुन्न करि गाई, माया सहित निरंजन राई ।
 अमर कोट कै नकल बनाई, जिन अँड मधि रच्यो पसारा है ॥
 तीजे है सहसुन्न सुखाली, महाकाल यहँ कन्या ग्रासी ।
 जोग संतायन आये अबिनासी, जिन गल नख छेद निकारा है ॥
 चौथे सुन्न अजोख कहाई, सुद्ध ब्रह्म पुर्ष ध्यान समाई ।
 आद्या यहँ बीजा ले आई, देखो सृष्टि पसारा है ॥
 पंचम सुन्न अलोल कहाई, तहँ अदली बंदीवान रहाई ।
 जिनका सतगुरु न्याव चुकाई, जहँ गादी अदली सारा है ॥
 षष्ठे सार सुन्न कहलाई, सार भँडार याही के माहीं ।
 नीजे रचना ताहि रचाई, जो सबहिन तेँ न्यारा है ॥
 सत सुन्न ऊपर सत्य की नगरी, बाट बिहंगम बाँकी डगरी ।
 सो पहुँचे चाले बिन पग री, ऐसा खेल अपारा है ॥
 पहिली चकरी समाध कहाई, जिन हंसन सतगुरु मति पाई ।

बेद भर्म सब दियो उड़ाई, तिरगुन तजि भये न्यारा है ॥
 दूजी चकरी अगाध कहाई, जिन सतगुरु संग द्रोह कराई ।
 पीछे आनि गहे सरनाई, जो यहाँ आन पधारा है ॥
 तीजी चकरी मुनिकर नामा, जिन मुनियन सतगुरु मति जाना ।
 सो मुनियन यहाँ आइ रहाना, करम भरम तजि डारा है ॥
 चौथी चकरी धुनि है भाई, जिन हंसन धुनि ध्यान लगाई ।
 धुनि सँग पहुँचे हमरे पाहीं, यह धुनि सबद मँझारा है ॥
 पंचम चकरी रास जो भाखी, अलमीना है तहँ मधि झाँकी ।
 लीला कोट अनन्त वहाँ की, जहँ रास बिलास अपारा है ॥
 षष्ठम चकरी बिलास कहाई, जिन सतगुरु सँग प्रीति निबाही ।
 छुटते देह जगह जहँ पाई, फिर नहिं भव अवतारा है ॥
 सतवीं चकरी बिनोद कहानो, कोटिन बंस गुरन तहँ जानो ।
 कलि में बोध किया ज्यों मानो, अँधकार खोया उजियारा है ॥
 अठवीं चकरी अनुरोध बखाना, तहाँ जुलह दीताना है ।
 जा का नाम कबीर बखाना, सो सब संतन सिर धारा है ॥
 ऐसी ऐसी सहस करोड़ी, ऊपर तले रची ज्यों पौड़ी ।
 गादी अदली रही सिर मौरी, जहँ सतगुरु बन्दीछोरा है ॥
 अनुरोध के ऊपर भाई, पद निर्बान के नीचे ताही ।
 पाँच संख याही ऊँचाई, जहँ अब्दुत ठाठ पसारा है ॥
 सोहल सुत हित दीप रचाई, सब सतु रहैं तासु के माहीं ।
 गादी अदल कबीर जहाँ ही, जो सबहिन में सरदारा है ॥
 पद निरबान है अनन्द अपारा, नूतन सूरति लोक सुधारा ।
 सत्य पुरुष नूतन तन धारा, जो सतगुरु संतन सारा है ॥
 आगे सत्यलोक है भाई, संखन कोस तासु ऊँचाई ।
 हीरा पन्ना लाल जड़ाई, जहँ अद्भुत खेल अपारा है ॥
 बाग बगीचे खिली फुलवारी, अमृत नहरें हो रहिं जारी ।
 हंसा केल करत तहँ भारी, जहँ अनहद धुरै अपारा है ॥

ता मधि अधर सिंहासन गाजै, पुरुष सबद तहँ अधिक बिराजै ।
 कोटिन सूर रोम इक लाजै, ऐसा पुरुष दीदारा है ॥
 हंस हंसनी आरत उतारैं, खोड़स भानु सुर पुनि चारैं ।
 पद बीना सत सबद उचारैं, जो बेधत हिये मँझारा है ॥
 ता पर अगम महल इक न्यारा, संखन कोटि तासु बिस्तारा ।
 बाग बावड़ी अमृत धारा, जहँ अधरी चलैं फुहारा है ॥
 मोती महल औ हीरन चौंरा, तेस बरन तहँ हंस चकोरा ।
 सहस सूर छबि हंसन जोरा, ऐसा रूप निहारा है ॥
 अधर सिंघासन जिंदा साई, अर्बन सूर रोम सम नाहीं ।
 हंस हिरंवर चँवर दुलाई, ऐसा अगम अपारा है ॥
 तहँ अधरी ऊपर अधर धराई, संखन संख तासु ऊँचाई ।
 झिल मिल हट सो लोक कहाई, जहँ झिलमिल झिलमिल सारा है ॥
 बाग बगीचे झिलमिल कारी, रतनन बड़े पात औ डारी ।
 मोती महल औ रतन अटारी, तहँ पुरुष बिदेह पधारा है ॥
 कोटिन भानु हंस को रूपा, सबद है वहाँ अजब अनूपा ।
 हंसा करत चँवर सिर भूपा, बिन कर चँवर दुलारा है ॥
 हंसा केल सुनो मन लाई, एक हंस के जो चित आई ।
 दूजा हंस समझि पुनि जाई, बिन मुख बैन उचारा है ॥
 ता आगे निःलोक है भाई, पुरुष अनामी अकह कहाई ।
 जो पहुँचे जानेंगे वाही, कहन सुनन से न्यारा है ॥
 रूप सरूप वहाँ कछु नाहीं, ठौर ठाँव कछु दीसे नाहीं ।
 अरज तूल कछु दृष्टि न आई, कै से कहूँ सुमारा है ॥
 जा पर किरपा करिहैं साई, गगनी मारग पावै ताही ।
 सत्तर परलय मारग माहीं, जब पावै दीदारा है ॥
 कहैं कबीर मुख कहा न जाई, ना कागद पर अंक चढ़ाई ।
 मानो गूँगे सम गुड़ खाई, सैनन बैन उचारा है ॥

आपही के घट में प्रगट परमेसुर है

आपही के घट में प्रगट परमेसुर है,
 ताहि छोड़ि भूलें नर दूर दूर जात हैं।
 कोई दौरे द्वारिका को कोई कासी जगन्नाथ,
 कोई दौरे मथुरा को हरिद्वार न्हात है ॥
 कोई दौरे बद्रिका को विषम पहार चढ़ै,
 कोई तो केदार जात मन में सुहात है।
 सुन्दर कहत गुरुदेव देइ दिव्य नैन,
 दूर ही के दूरबिन निकट दिखात है ॥

—सुन्दर दास जी

सुन्दर दास जी कह रहे हैं कि अपने शरीर में ही प्रभु का निवास है, पर उसे छोड़कर भूलवश लोग दूर-दूर जगहों पर जा रहे हैं। कोई द्वारिका में जा रहा है, कोई काशी में जा रहा है, कोई प्रभु के दर्शन करने जगन्नाथ में जा रहा है, कोई मथुरा को जा रहा है, कोई हरिद्वार में जाकर नहा रहा है, कोई बद्रिका में जाकर कठिन पहाड़ चढ़ रहा है, कोई केदार जाकर मन में सुख मान रहा है कि प्रभु के दर्शन कर लिये। पर सुन्दर दास कह रहे हैं कि गुरुदेव ऐसी दिव्य दृष्टि प्रदान कर देते हैं दूर की सब चीजों पास में ही, अपने अन्दर में ही दिखने लगती हैं,

सुन हिरदे वह पुरुष निनारा

सुन हिरदे वह पुरुष निनारा। जो कहें संत निरंजन पारा ॥
 निरगुन निराकार नहिं जोति। जब नहिं बेद कितेब न पोथी ॥
 है जहाँ काल अकाल न जावे। सो घर संत बिना नहिं पावे ॥
 सतगुरु की जब बानी बूझे। तब कछु रमक नैन से सूझे ॥
 सबद ब्रह्म अच्छर है भाई। सोई निरगुन निज ब्रह्म कहाई ॥
 अज अचिंत यहि को बतलावा। सत्य पुरुष इस पार कहावा ॥
 जहाँ निरगुन सरगुन नहिं कोई। सो पद संतन सरन समोई ॥
 —तुलसी साहिब (हाथरस वाले)

तुलसी साहिब अपने शिष्य को समझाते हुए कह रहे हैं, हे हृदय ! जिस परम-पुरुष की बात संत कह रहे हैं, वो निरंजन से परे है। वहाँ साकार, निराकार और ज्योति भी नहीं है। वेद और अन्य पोथियों भी वहाँ नहीं हैं। वहाँ काल और अकाल दोनों नहीं है। उस घर का भेद संतों के बिना नहीं पाया जा सकता है। जब तुम सद्गुरु की वाणी को समझोगे, तब उसकी कुछ झलक दिखेगी। जो शब्द ब्रह्म है, वही तो निरंजन है। सत्य पुरुष इस शब्द ब्रह्म से परे है। जहाँ सगुण-निर्गुण दोनों नहीं हैं, वो पद तो संत जनों के चरणों में है।

बैरागिन भूली आप में

बैरागिन भूली आप में जल में खोजै राम ॥
 जल में खोजै राम जाय के तीरथ छानै ।
 भरमै चारिउ खूँट नहीं सुधि अपनी आनै ॥
 फूल माहिं ज्यों बास काठ में अगिन छिपानी ।
 खोदे बिनु नहिं मिलै अहै धरती में पानी ॥
 जैसे दूध घृत छिपा छिपी मेहँदी में लाली ।
 ऐसे पूरन ब्रह्म कहूँ तिल भरि नहिं खाली ॥
 पलटू सतसंग बीच में करि ले अपना काम ।
 बैरागिन भूली आप में जल में खोजै राम ॥

—पलटू साहिब

पलटू साहिब कह रहे हैं कि वैरागिनी जीवात्मा अपने में भूलकर उस प्रभु को जल में खोज रही है। कभी वो तीर्थों में ढूँढ़ने निकल जाती है। चारों दिशाओं में भटकती फिरती है, पर अपना भेद नहीं जान पाती। जिस तरह फूल में खुशबू रहती है, लकड़ी में आग रहती है, ऐसे ही वो परमात्मा भी अपने में ही है। पर जैसे धरती में पानी रहता है, पर खोदे बिना नहीं मिलता है, ऐसे ही प्रभु अंदर में ही है, पर अंदर में खोज किये बिना वो नहीं मिलेगा। जैसे दूध में घी समाया है, जैसे मेहँदी में लाली

आवे न जावे मरे न जन्मे सोई सत्यपुरुष हमारा है
छिपी है, ऐसे ही वो प्रभु सब जगह है। पलटू साहिब कह रहे हैं, हे
जीवात्मा ! तू सत्संग में आकर अपना कल्याण कर ले।

घर में रहै शिकार

जंगल जंगल मैं फिरों घर में रहै शिकार ॥
घर में रहै शिकार भेद ना कोउ बतावै ।
गया अहेरी भूलि कहाँ से सावज पावै ॥
खोजा चारिउ खूँट कहीं कुछ नजर न आवै ।
कतहुँ ना सुधि आइ नहीं कोउ भेद बतावै ॥
जप तप तीरथ बरत किया बहु नेम अचारा ।
खोजा बेद पुरान सबै सतसंग पुकारा ॥
सतगुरु किया इसारा पलटू लीन्हा मार ।
जंगल जंगल मैं फिरों घर में रहै शिकार ॥

—पलटू साहिब

पलटू साहिब कह रहे हैं कि मैं परमात्मा रूपी अपने शिकार की
खोज में जंगल-जंगल फिर आया, पर शिकार तो घर में ही बैठा हुआ था।
पर यह भेद किसी ने नहीं बताया, इसलिए शिकारी (पलटू दास) भूल
गया। अब शिकार कहाँ से मिले ! चारों दिशाओं में देख लिया, पर कहीं
कुछ नजर नहीं आया और फिर न ही कोई भेद बताने वाला मिला। जप,
तप, तीर्थ, व्रत आदि बहुत किये, पर कुछ लाभ नहीं हुआ। फिर वेद,
पुराण आदि भी पढ़े; सबने सत्संग की महिमा कही। पलटू साहिब कह
रहे हैं कि तब मैंने सद्गुरु के संग किया। सद्गुरु ने इशारा करके अंदर
में ही परमात्मा रूपी शिकार का भेद दे दिया। तब मैंने उसे पा लिया।

पुरुष इनहिं तें न्यारा

जामें आइ अटक ना कबहीं, उग्र ज्ञान है सारा ॥
सिकली बिना साफ ना होवे, चकमक चित गहि झारा ।

जगमग जोति बरै जहँ निर्मल, पुरुष इनहिं तें न्यारा ॥
 जा की छबि येहि छाड़ जगत में, देखो सुरत अकारा ॥
 निर्गुन सगुण तें न्यारा कहिये, खासा खसम तुम्हारा ॥
 केते ज्ञानी ज्ञान कथत हैं, जोगिन्ह जुगुति सम्हारा ॥
 हाड़ चाम रुधिर की मोटरी, ता में है करतारा ॥
 करै बिबेक बिचार जो आवै, मन का सकल पसारा ॥
 कहँ दरिया दर खोजहु प्रानी, कहि दिन्ह बारम्बारा ॥

—दरिया साहिब (बिहार वाले)

दरिया साहिब कह रहे हैं कि कितना भी कठिन ज्ञान आ जाए, उसमें भी बचाव नहीं है। क्योंकि चित्त बड़ा ही गंदा है, जो गुरु रूपी सिकलीगर के बिना साफ़ नहीं हो सकता है। योगी जिस जगमग-जगमग करती हुई ज्योति के दर्शन करते हैं, परम-पुरुष उससे परे है। उसी की छबि सुरति में छाई हुई है। वो सगुण और निर्गुण दोनों से परे है और वही आत्मा का सुंदर पति है। बड़े-बड़े ज्ञानी ज्ञान की बातें कहते हैं, योगी अनेक तरह की युक्तियाँ बताते हैं। वो कहते हैं कि हड्डी, चमड़े और रक्त की गठरी में करतार है। यदि थोड़ा विवेक करें तो समझ आए कि यह सब मन का पसार है। दरिया साहिब कहते हैं कि मैं बारम्बार कहता हूँ कि अपने अंदर खोज करो यानी सुरति में ही सब कुछ मिल जायेगा।

वो साहिब सब संत पुकारा

उधरा वह द्वारा वाह गुरु परिवारा ॥
 चढ़ गई चंग पतंग संग जो चंद चकोर निहारा ॥
 सुरति सोर जोर ज्यों खोलत, कुंज कुलफ किवारा ॥
 सुरति धाई धँसी ज्यों धारा, पैठि निकसि गई पारा ॥
 आठ अटा की अटारी मझारा, देखा पुरुष न्यारा ॥
 निराकार आकार न ज्योति, नहिं वहाँ वेद विचारा ॥
 ओंकार कर्त्ता नहिं कोई, नहिं वहाँ काल पसारा ॥

वो साहिब सब संत पुकारा, और पाखंड पसारा।
सतगुरु चीन्ह दीन्ह यह मारग, नानक नज़र निहारा॥

—नानक देव जी

कह रहे हैं कि जब आठवें कमल पर पहुँचकर मेरा 11वाँ द्वार खुला तो मैंने एक न्यारा पुरुष देखा। वो न निराकार था, साकार, न ज्योति पुरुष ही था। उसका जिक्र वेदों में भी नहीं है। वो ओंकार भी नहीं है, कर्त्ता पुरुष भी नहीं है और वहाँ काल का पसार भी नहीं है। उसे सब संतों ने साहिब कहकर पुकारा है। अन्य जो भी है, झूठ है।

अमरपुर ले चल हो सजना

अमरपुर ले चल हो सजना॥
अमरपुरी की साँकर गलिया, अड़बड़ है चढ़ना।
ठोकर लगी गुरु शब्द की, उधर गये झपना॥
वही अमरपुर लागि बजरिया, सौदा है करना।
वही अमरपुर संत बसत हैं, दरशन है लहना॥
संत समाज सभा जहाँ बैठी, वही पुरुष अपना।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, भव सागर तरना॥

हे सद्गुरु रूपी प्रियतम, मुझे अपने अमर लोक में ले चलो। अमरलोक की राह बड़ी सँकरी है। वहाँ चलना बड़ा कठिन है। वहाँ पर संतों का वास है और वहीं पर परम पुरुष का वास है। वहीं पहुँचकर यह हंस भवसागर से पार होता है।

वेद भेद न पाया

बलिहारी अपने साहिब की, जिन यह युक्ति बनाई।
उनकी सोभा केहि बिधि कहिये, मो से कही न जाई॥
बिना जोत की जहाँ उँजियारी, सो दरसै वह दीपा।
निरतैं हंस करैं कतूहल, वोही पुरुष समीपा॥
झलकै पद्म नाना बिधि बानी, माथे छत्र बिराजै।

कोटिन भानु चन्द्र की क्रींती, रोम रोम में छाजै ॥
 कर गहि बिहँसि जबै मुख बोले, तब हंसा सुख पावै ।
 अंस बंस जिन बूझि बिचारी, सो जीवन मुक्तावै ॥
 चौदह लोक बेद का मंडल, तहँ लगि काल दुहाई ।
 लोक वेद जिन फँदा काटी, ते वह लोक सिधाई ॥
 सात सिकारी चौदह पारिंद, भिन्न भिन्न निस्तावै ।
 चार अंस जिन समुझि बिचारी, सो जीवन मुक्तावै ॥
 चौदह लोक बसै जम चौदह, तहँ लगि काल पसारा ।
 ता के आगे जोति निरंजन, बैठै शून्य मँझारा ॥
 सोरह खंड अच्छर भगवाना, जिन यह सृष्टि उपाई ।
 अच्छर कला से सृष्टि उपजी, उनहीं माहिं समाई ॥
 सत्रह संख पै अधर द्वीप जहँ, सब्दातीत बिराजै ।
 निरतै संखी बहु बिधि सोभा, अनहद बाजा बाजै ॥
 ता के ऊपर परम धाम है, मरम न कोऊ पाया ।
 जो हम कही नहीं कोऊ मानै, ना कोउ दूसर आया ॥
 बेदन साखी सब जिव अरुझो, परम धाम ठहराया ।
 फिर फिर भटके आप चतुर होइ, वह घर काहु न पाया ॥
 जो कोई होई सत्य का किनका, सो हम को पतियाई ।
 और न मिले कोटि कहि थाके, बहुरि काल घर जाई ॥
 सोरह संख के आगे समरथ, जिन जग मोहिं पठाया ।
 कहै कबीर आदि की बानी, बेद भेद नहिं पाया ॥

राम का नाम काहू न जानी

राम का नाम संसार में सार है,
 राम का नाम अमृत बानी ।
 राम के नाम तें कोटि पातक हरै,
 राम का नाम बिस्वास मानी ॥

राम का नाम लै साधु सुमिरन करै,
 राम का नाम लै भक्ति ठानी।
 राम का नाम लै सूर सन्मुख रहै,
 पैठ संग्राम में युद्धि ठानी॥
 राम का नाम नारि सत्ती भई,
 जरी मरी कंत संग खेह उड़ानी।
 राम का नाम लै तीर्थ सब भरमिया,
 करत अस्नान झक्कोरि पानी॥
 राम का नाम लै मूर्ति पूजा करै,
 राम का नाम लै देत दानी।
 राम का नाम लै बिप्र भिच्छुक बनै,
 राम का नाम दुर्लभ जानी॥
 राम का नाम चारि वेद का मूल है,
 निगम निचोर करि तत्व छानी।
 राम का नाम षट सासतर मत्थिये,
 षट दरसन में चली कहानी॥
 राम का नाम अगाध लीला बड़ी,
 खोजते खोज नहिं हारि मानी।
 राम का नाम लै बिस्नु समुरिन करै,
 राम का नाम शिव योगी ध्यानी॥
 राम का नाम लै सिद्ध साधक बने,
 सिव सनकादिक नारद गियानी।
 राम का नाम लै रामचंद्र दृष्टि लइ,
 गुरु वसिष्ठ भये मंत्र दानी॥
 कहाँ लौं कहाँ अगाध लीला रची,
 राम का नाम काहू न जानी।
 राम का नाम लै कृष्ण गीता कथी,

बाँधिया सेत तब मर्म जानी ॥
 है कैसो निरगुन निराकार परम जोति,
 तासु को नाम निरंकार मानी ।
 रूप बिन रेख बिन निगम अस्तुति करै,
 सत्त की राह अकथ कहानी ॥
 बिस्तु सुमिरन करै सिव योग जा को धरै,
 भनै सब ब्रह्म वेदान्त गाया ।
 सनकादि ब्रह्मादि कोई पार पावै नहीं,
 तासु का नाम कह रामराया ॥
 कहैं कबीर वह सक्स तहकीक करु,
 राम का नाम जो पृथ्वी लाया ॥

—कबीर साहिब

कह रहे हैं कि सब 'राम-राम' कह रहे हैं। राम का नाम ही संसार में सार कहा जा रहा है। सब उसी का नाम लेकर सब काम कर रहे हैं। पर वास्तव में उस राम को कोई नहीं जानता है। बड़े-बड़े भी उसे नहीं जानते हैं। कह रहे हैं कि उस आदमी की खोज करो, जो राम का नाम सबसे पहले पृथ्वी पर लाया। यानी राम का नाम बहुत पहले से है।
नोट : कोई सगुण राम की बात कर रहा है तो कोई निर्गुण राम की बात कर रहा है। साहिब ने चार राम की बात की है और उस सच्चे राम को साहिब कहा है। उसे सगुण-निर्गुण दोनों से परे बताया है। उसी राम की ओर संकेत करते हुए कह रहे हैं कि उस राम को कोई नहीं जानता है।

यह मंगल सत्य लोक के

लगन लगी सत्य लोक, सुकृत मन भावहीं ।
 सुफल मनोरथ होय, तो मंगल गावहीं ॥
 चलु सखि सुरति संजोय, अगम घर उठि चलो ।
 हंस सरूप सँवारि, पुरुष सों तुम मिलो ॥

कनक पत्र पर अंक, अनुपम अति कियो ।
 तुमहि सकल संदेस, लगन पिय लिख दियो ॥
 लिख दियो सब्द अगोल, सोहंग सुहावता ।
 पूरन परम निधान, ताहि बल जम जिता ॥
 तत करनी कर तेल, हरदि हित लावहीं ।
 कंकन नेह बँधाय, मधुर धुन गावहीं ॥
 अच्छत थार भराय, तो चौक पुरावहीं ।
 हीरा हंस बिठाय, तो सब्द सुनावहीं ॥
 कंचन खम्भ अँजोर, अधर चारो युगा ।
 बाजत अनहद तूर, सेत मंडप छजा ॥
 अगर अमी भरि कुम्भ, रतन चौरी रची ।
 हंस पढ़ै तहँ सब्द, मुक्ति बेदी रची ॥
 हस्त लिये सत केल, ज्ञान गढ़ बन्धना ।
 मोच्छ सरूपी मौर, सीस सुन्दर बना ॥
 सुरति पुरुष सों मेल, तो भाँवरि परि गई ।
 अमर तिलक ताम्बूल, सुघर माला दर्ई ॥
 दीन्हो सुरति सुहाग, पदारथ चारि को ।
 निस दिन ज्ञान विचार, शब्द निर्वार को ॥
 यह मंगल सत लोक को, हंसा गावहीं ।
 कहैं कबीर समुझाय, बहुरि नहिं आवहीं ॥

सत्यलोक की अकह कहानी

सत्यलोक की अकह कहानी । सोइ निज सतगुरु की सहदानी ॥
 रूप बरन जहँ वहँ नहिं देसा । तीन लोक अचरज सा देखा ॥
 नहिं वहँ पाँच तत्त की काया । सत्यपुरुष आपहि निर्माया ॥
 नहिं परिकर्ति पचीसो होई । जरा मरन जाने नहिं कोई ॥
 दस इंद्री नाहीं षट कर्मा । बरन भेद नाहीं कुल धर्मा ॥

दिवस न रैन चंद्र नहिं सूर। बिमल प्रकास सकल विधि पूरा॥
स्वर्ग नरक गुन तीन न होई। सब्द सरूप सकल है सोई॥

—कबीर साहिब

कह रहे हैं कि सत्य लोक की बात कहने में नहीं आती है। वहाँ तीन लोक वाली कोई भी बात नहीं है। वहाँ सब शब्द सरूप हैं।

है सो कहा न जाई

बाबा अगम अगोचर कैसा, तातें कहि समझायो ऐसा॥
जो दीसै तो है नाहीं, है सो कहा न जाई।
सैना बैना कहि समुझाओ, गूँगे का गुड़ भाई॥
दृष्टि न दीसै मुष्टि न आवै, विनसै नाहिं नियारा।
ऐसा ज्ञान कथा गुरु मेरे, पंडित करौ विचारा॥
बिन देखे परतीति न आवै, कहे न कोउ पतियाना।
समुझा होय सो सब्दहिं चीन्है, अचरज होय अयाना॥
कोई ध्यावै निराकार को, कोई ध्यावै आकारा।
वह तो इन दोउ से न्यारा, जानै जाननहारा॥

—कबीर साहिब

उस परम पुरुष के बारे में कैसे समझाया जाए। जो ऐसे दिखाई दे जाए, ऐसा तो वो है नहीं और जो वो है, वो कहा नहीं जाता है। बस, वो तो गूँगे के गुड़ की तरह है.....खाने वाला ही समझ सकता है। कोई साकार का ध्यान कर रहा है, कोई निराकार का, पर वो इन दोनों से न्यारा है। कोई बिरला ही उसे जान सकता है।

दस मुकामी रेखता

चला जब लोक को सोक सब त्यागिया,
हंस को रूप सतगुरु बनाई।
भृंग ज्यों कीट को, पलटि भृंगि करे,

आप सम रंग दै, लै उड़ाई ॥
 छोड़ि नासूत मलकूत को पहुँचिया,
 बिस्नु की ठाकुरी दीख जाई।
 इन्द्र कुबेर रंभा जहाँ नृत करें,
 देव तैंतीस कोटिक रहाई ॥
 छोड़ि बैकुण्ठ का हंस आगे चला,
 सून्य में जोति जगमग जगाई।
 जोति परकास में निरखि निःतत्व को,
 आप निर्भय भया भय मिटाई ॥
 अलख निर्गुण जेहि वेद अस्तुति करै,
 तीनहुँ देव को है पिताई।
 भगवान तिन के परे सेत मूरत धरे,
 भग की आनि तिनको रहाई ॥
 चार मोकाम पर खण्ड सोरह कहे,
 अंड को छोर ह्याँ तें रहाई।
 अंड के परे अस्थान आचित को,
 निरखिया हंस जब उहाँ जाई ॥
 सहस औ द्वादसों रूह है संग में,
 करत किलोल अनहद बजाई।
 तासु के बदन की कौन महिमा कहों,
 भासती देंह अति नूर छाई ॥
 महल कंचन बने मनी ता में जड़े,
 बैठ तहँ कलस अखण्ड छाजे।
 अचिंत के परे अस्थान सोहंग का,
 हंस छत्तीस तहवाँ बिराजे ॥
 नूर का महल और नूर की भूमि है,
 तहाँ आनन्द सों दुन्द भाजे।

करत किलोल बहु भांति से संग इक,
 हंस सोहंग के जों समाजे ॥
 हंस जब जात षट चक्र को बेधि के,
 सात मोकाम में नजर फेरा।
 परे सोहंग के सुरति इच्छा कहीं,
 सहस बावन जहाँ हंस हेरा ॥
 रूह की रासि तें, रूप उन को बनो,
 नाहिं उपमाहिं दूजी निबेरा।
 सुरति से भेंट के सब्द की टेक चढ़ि,
 देखि मोकाम अंकूर केरा ॥
 सून्य के बीच में बिमल बैठक तहाँ,
 सहज अस्थान है गैब केरा।
 नवो मोकाम यह हंस जब पहुँचिया,
 पलक बिलम्ब ह्वाँ कियो डेरा ॥
 तहाँ से डोरिमक तार ज्यों लागिया,
 ताहि चढ़ि हंस गौ दै तरेरा।
 कये आनन्द सों फँद सब छोड़िया,
 पहुँचिया जहाँ सत्यलोक मेरा ॥
 हंसनी हंस सब गाय बजाय के,
 साजि के कलस वोहि लेन आये।
 जुगन जुग बीछुरे मिले तुम आइ के,
 प्रेम करि अंग सों अंग लाये ॥
 पुरुष ने दरस जब दीन्हिया हंस को,
 तपनि बहु जन्म की तब नसाये।
 पलटि के रूप जब एक सों कीन्हिया,
 मनहुँ तब भानु षोड़स उगाये ॥
 पुहुप के दीप पियूष भोजन करै,

सब्द देह जब हंस पाई ।
 पुष्प के सेहरा हंस और हंसिनी,
 सच्चिदानन्द सिर छत्र छाई ॥
 दिपै बहु दामिनी दमक बहु भांति की,
 जहाँ घन सब्द की घुमड़ लाई ।
 लगे जहाँ बरसने गरज घन घोर के,
 उठत तहाँ सब्द धुनि अति सुहाई ॥
 सुनै सोइ हंस तहं जुत्थ के जुत्थ है,
 एक ही नूर इक रंग रागे ।
 करत बिहार मन भावनी मुक्ति भे,
 कर्म औ भर्म सब दूरि भागे ॥
 रंग औ भूष कोई परखि आवै नहीं,
 करत किलोल बहु भांति पागे ।
 काम औ क्रोध मद लोभ अभिमान सब,
 छाड़ि पाखण्ड सत्य सब्द लागे ॥
 पुरुष के बदन की कौन महिमा कहौं,
 जगत में उभय कछु नाहिं पाई ।
 चंद्र औ सूर गन जोति लागै नहीं,
 एकहू नख की परकास भाई ॥
 पान परवान जिन बंस का पाइया,
 पहुँचिया पुरुष के लोक जाई ।
 कहैं कबीर यहि भांति सों पाइ हो,
 सत्य की राह सो प्रगट गाई ॥

—कबीर साहिब

कबीर साहिब ने जब मुहम्मद साहिब को अमर-लोक की सैर कराई तो जिन-जिन मुकामों को देखते हुए आगे बढ़ते गये, उन सबका हाल बताया है। सबसे पहले जीव को भृंगी-कीट की तरह हंस समान

करके ले गये। वैकुण्ठ, ब्रह्म लोक, निरंजन लोक और फिर सातों आकाश से परे कैसे परम-पुरुष के धाम पहुँचे, यह सब बताया है।

कह रहे हैं कि जब अमर लोक को हंस चला तो संसार के दुख छूट गये। सद्गुरु ने भृंगी की भांति उसे अपने रंग में रँगकर हंस समान कर दिया और उड़ाकर ले गये। पहले नासूत (माया का देश) स्थान पर पहुँचे और फिर वहाँ से मलकूत (वैकुण्ठ) पहुँचे और विष्णु जी की नगरी देखी, जहाँ तैंतीस करोड़ देवता और अप्सराएँ आदि थीं। फिर जब उसे स्थान को छोड़कर हंस आगे चला तो शून्य (ज्योति-निरंजन) में जगमग ज्योति को देखा। यही स्थान अलख निरंजन का है, जिसकी वेद, पुराण आदि स्तुति गाते हैं और जो तीनों देवों का पिता भी है। फिर वहाँ शून्य से आगे निकलकर अचिंत लोक में पहुँचे। ऐसे ही आगे चलते गये और सहज लोक में पहुँचे। जैसे-जैसे आगे बढ़ते जा रहे थे, आनन्द बढ़ता जा रहा था। सहज लोक के बाद सत्य लोक आया। वहाँ पहुँचे तो सब हंस आकर मिले, गले लगे। फिर जब परम-पुरुष के सम्मुख हुए तो साहिब ने हंस को दर्शन दिया। तब जन्म-जन्मांतरों के तपन बुझ गयी और हंस में 16 सूर्यों का प्रकाश आ गया। वहाँ हंस अमृत भोजन करने लगा। वहाँ सब हंसों की देह शब्द की है। इस तरह अमर-लोक का नजारा देखा। सांसारिक भाव में कह रहे हैं कि परम-पुरुष के शरीर की महिमा तो कही ही नहीं जा सकती है। उसके तो एक नख के प्रकाश की महिमा की तुलना सूर्य, चाँद, तारों की ज्योति से नहीं की जा सकती है



सब परबत स्याही करु,
धोलू समुन्दर जाय।
धरती का कागज करुँ,
गुरु अस्तुति न समाय ॥

आरती

आरति करहुँ संत सद्गुरु की, सद्गुरु सत्यनाम दिनकर की ।
काम, क्रोध मद, लोभ नसावन, मोह ग्रसित करि सुरसरि पावन ।
हरहिं पाप कलिमल की, आरति करहुँ संत सद्गुरु की ॥
सद्गुरु सत्यनाम.....

तुम पारस संगति पारस तब, कलिमल ग्रसित लौह प्राणी भव ।
कंचन करहिं सुधर की, आरति करहुँ संत सद्गुरु की ॥
सद्गुरु सत्यनाम.....

भुलेहुँ जो जिव संगति आवें, कर्म भर्म तेहि बाँधि न पावें ।
भय न रहे यम घर की, आरति करहुँ संत सद्गुरु की ॥
सद्गुरु सत्यनाम.....

योग अग्नि प्रगटहि तिनके घट, गगन चढ़े श्रुति खुले वज्रपट ।
दर्शन हों हरिहर की, आरति करहुँ संत सद्गुरु की ॥
सद्गुरु सत्यनाम.....

सहस्र कैवल चढ़ि त्रिकुटी आवें, शून्य शिखर चढ़ि बीन बजावें ।
खुले द्वार सतघर की, आरति करहुँ संत सद्गुरु की ॥
सद्गुरु सत्यनाम.....

अलख अगम का दर्शन पावें, पुरुष अनामी जाय समावें ।
सद्गुरु देव अमर की, आरति करहुँ संत सद्गुरु की ॥
सद्गुरु सत्यनाम.....

एक आस विश्वास तुम्हारा, पड़ा द्वार मैं सब विधि हारा ।
जय, जय, जय गुरुवर की, आरति करहुँ संत सद्गुरु की ॥
सद्गुरु सत्यनाम.....

आरती

जय सद्गुरु देवा, साहिब जय सद्गुरु देवा,
सब कुछ तुम पर अर्पण करहूँ पद सेवा।

जय गुरुदेव दया निधि, दीनन हितकारी, साहिब भक्तन हितकारी,
जय जय मोह विनाशक, जय जय तिमिर विनाशक, भय भंजन हारी।
साहिब जय सद्गुरु देवा

ब्रह्मा विष्णु सदाशिव, गुरु मूरति धारी, साहिब प्रभु मूरति धारी,
वेद पुराण बखानत, शास्त्र पुराण बखानत, गुरु महिमा भारी।
साहिब जय.....

जप तप तीर्थ संयम, दान विधि दीन्हे, साहिब दान बहुत दीन्हे,
गुरु बिन ज्ञान न होवे, दाता बिन ज्ञान न होवे, कोटि यत्न कीन्हे।
साहिब जय.....

माया मोह नदी जल, जीव बहे सारे, साहिब जीव बहे सारे,
नाम जहाज बिठाकर, शब्द जहाज चढ़ाकर, गुरु पल में तारे।
साहिब जय.....

काम क्रोध, मद, लोभ, चोर बड़े भारी, साहिब चोर बहुत भारी,
ज्ञान खड्ग दे कर में, शब्द खड्ग देकर में, गुरु सब संहारे।
साहिब जय.....

नाना पंथ जगत में निज-निज गुण गावें, साहिब न्यारे-न्यारे यश गावें,
सब का सार बताकर, सब का भेद लखा कर, गुरु मार्ग लावें।
साहिब जय.....

गुरु चरणामृत निर्मल, सब पातक हारी, साहिब सब दोषक हारी,
वचन सुनत तम नासे, शब्द सुनत भ्रम नासे, सब संशय टारी।
साहिब जय.....

तन, मन, धन सब अर्पण, गुरु चरणन कीजै, साहिब दाता अर्पण कीजै,
सद्गुरु देव परमपद, सद्गुरु देव अचलपद, मोक्ष गती लीजै।
साहिब जय सद्गुरु देवा

पुस्तक सूची

हिन्दी में

1. परा रहस्या
2. मासिक पत्रिका सत्यकेतु
3. पावन प्रार्थनाएँ
4. सद्गुरु चालीसा
5. वार्षिक डायरी
6. सद्गुरु भक्ति
7. कहाँ से तू आया और कहाँ तुझे जाना रे?
8. सत्संग सुधारस
9. नाम अमृत सागर
10. अमृत वाणी
11. सद्गुरु नाम जहाज़ है
12. चल हंसा सतलोक
13. कोटि नाम संसार में तिनते मुक्ति न होय
14. मूल नाम गुप्त है, जाने बिरला कोय
15. गुरु सुमिरै सो पार
16. तीन लोक से न्यारा
17. सेहत के लिए ज़रूरी
18. सहजे सहज पाइये
19. रोगों से छुटकारा
20. सद्गुरु महिमा
21. भक्ति के चोर
22. अनुरागसागर वाणी
23. भक्ति सागर
24. हरि सेवा युग चार है, गुरु सेवा पल एक
25. सत्य नाम के सुमरते उबरे पतित अनेक
26. काग पलट हंसा कर दीना
27. कस्तूरी कुण्डल बसै मृग खोजे बन माहिं
28. गुरु पारस गुरु परस है
29. गुरु अमृत की खान
30. शीश दिये जो गुरु मिले तो भी सस्ता जान
31. मूल सुरति
32. भृंग मता होय जिहि पासा, सोई गुरु सत्य धर्मदासा
33. मैं कहता हूँ आँखिन देखी
34. गुरु संजीवन नाम बतावे
35. नाम बिना नर भटक मरे
36. रोगों की पहचान
37. यह संसार काल को देशा
38. न्यारी भक्ति
39. साहिब तेरी साहिबी सब घट रही समाय
40. जाप मरे अजपा मरे अनहद भी मर जाए

41. आयुर्वेद का कमाल रोगों के निदान में
42. सुरति समानी नाम में
43. सबकी गठरी लाल है, कोई नहीं कंगाल
44. निन्दक जीवे युगन युग काम हमारा होय।
45. निराले सद्गुरु
46. कुँजड़ों की हाट में हीरे का क्या मोल
47. जीवड़ा तू तो अमर लोक का पड़ा काल बस आई हो
48. मुझे है काम 'सद्गुरु से जगत रूठे तो रूठन दे'
49. जेहि खोजत कल्पो भये घटहि माहिं सो मूर
50. आत्म ज्ञान बिना नर भटके
51. बिन सतगुरु बाँचे नहीं कोटिन करे उपाय
52. अँधी सुरति नाम बिन जानो
53. सत्यनाम निज औषधि सद्गुरु दर्ई बताय
54. सेहत संजीवनी
55. भक्ति दान गुरु दीजिए
56. मन पर जो सवार है ऐसा ऐसा विरला कोई
57. सत्यनाम है सार बूझौ सन्त विवेक करि
58. रोग निवारक
59. मुक्ति भेद मैं कहौं विचारी
60. "तेरा बैरी कोई नहीं तेरा बैरी मन"
61. सुरति का खेल सारा है
62. सार शब्द निहअक्षर सारा
63. करूँ जगत से न्यार
64. बिन सत्संग विवेक न होई
65. सत्य नाम को जनि कर दूजा देई बहा
66. सुरत कमल सद्गुरु स्थाना
67. अब भया रे गुरु का बच्चा
68. मनहिं निरंजन सबै नचाए
69. सत्यपुरुष को जानसी तिसका सतगुरु नाम
70. आपा पौ आपहि बँध्यो
71. सत्य भक्ति का भेद न्यारा
72. जपो रे हंसा केवल नाम कबीर
73. सत्य भक्ति कोई बिरला जाना
74. जगत है रैन का सपना
75. 70 प्रलय मारग माहीं
76. सार नाम सत्यपुरुष कहाया
77. आवे न जावे मरे न जन्मे सोई सत्यपुरुष हमारा है